इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-102

प्राचीन विश्व की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पैटर्न

''शिक्षा मानव को बन्धनों से मुक्त करती है और आज के युग में तो यह लोकतंत्र की भावना का आधार भी है। जन्म तथा अन्य कारणों से उत्पन्न जाति एवं वर्गगत विषमताओं को दूर करते हुए मनुष्य को इन सबसे ऊपर उठाती है।''

–इन्दिरा गांधी

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

" *Education is a liberating force, and in our age it is also a democratising force, cutting across the barriers of caste and class, smoothing out inequalities imposed by birth and other circumstances.*"

– Indira Gandhi

इग्नू
जन-जन का
विश्वविद्यालय

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ

BHIC-102

प्राचीन विश्व की सामाजिक संरचना और सांस्कृतिक पैटर्न

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

विशेषज्ञ समिति

प्रो. दरवेश गोपाल
निदेशक
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. पी. के. बसंत
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. आई. एच. सिद्दीकी
पूर्व-प्रोफेसर (इतिहास)
अलीगढ़ मुस्लिम यूनीवर्सिटी
अलीगढ़, उत्तरप्रदेश

डॉ. संगीता पांडे
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. नलिनी तनेजा
स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

प्रो. एस. एम. अज़ीज़ुद्दीन
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
जामिया मिलिया इस्लामिया
नई दिल्ली

प्रो. आभा सिंह
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

प्रो. ए. आर. खान (*संयोजक*)
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

पाठ्यक्रम संयोजक : प्रो. आभा सिंह

प्रधान संपादक : प्रो. ए. आर. खान

पाठ्यक्रम संयोजन दल

प्रो. आभा सिंह **डॉ. दिव्या सेठी** **डॉ. प्रियंका खन्ना**

पाठ्यक्रम निर्माण दल

इकाई सं.	इकाई लेखक	अनुवादक
1	डॉ. प्रियंका खन्ना मानविकीय एवं सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ जी.डी. गोयनका विश्वविद्यालय, हरियाणा	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली
2	प्रो. रश्मि सिन्हा मानव विज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इग्नू, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
3	डॉ. शतरुपा भट्टाचार्य लेडी श्री राम कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय दिल्ली	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय नई दिल्ली
4	डॉ. श्री मंजरी मिरांडा हाउस दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
5	डॉ. श्री मंजरी मिरांडा हाउस दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
6	प्रो. पी. के. बसंत इतिहास एवं संस्कृति विभाग जामिया मिलिया इस्लामिया, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
7	प्रो. जया मेनन शिव नाडर यूनीवर्सिटी गौतम बुद्ध नगर, उत्तर प्रदेश	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
8	डॉ. सोहिनी बसाक सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज जवाहर लाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	डॉ. मारतंड प्रगल्भा सेंटर फॉर लैंग्वेज, लिट्रेचर एंड कल्चर स्टडीज जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
9	प्रो. माधवी थांपी ऑनरेरी फैलो इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज़ शिमला	डॉ. शिवांगिनी टंडन महिला अध्ययन (विमेंस स्टडीज) विभाग अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय अलीगढ़, उत्तर प्रदेश

10	डॉ. शतरुपा भट्टाचार्य लेडी श्री राम कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. मुनि विजय स्कूल ऑफ सोशल साइंसेस इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
11	डॉ. बिन्दु साहनी फैलो, इंडियन इन्स्टीट्यूट ऑफ एडवान्स्ड स्टडीज़ शिमला	डॉ. मुनि विजय स्कूल ऑफ सोशल साइंसेस इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
12	डॉ. जीना जेकब सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज जवाहरलाल नहेरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
13	डॉ. जीना जेकब सेंटर फॉर हिस्टॉरिकल स्टडीज जवाहरलाल नहेरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली	सुश्री गीता नई दिल्ली
14	डॉ. नलिनी तनेजा स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. मुनि विजय स्कूल ऑफ सोशल साइंसेस इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली
15	डॉ. नलिनी तनेजा स्कूल ऑफ ओपन लर्निंग दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली	डॉ. दिव्या सेठी इतिहास संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

सामग्री एवं प्रारूप संपादन

प्रो. आभा सिंह
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. प्रियंका खन्ना
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

डॉ. दिव्या सेठी
इतिहास संकाय
सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ
इग्नू, नई दिल्ली

हिंदी परिष्कर

प्रो. ए. आर. खान

हिंदी संयोजक

प्रो. आभा सिंह
डॉ. दिव्या सेठी

मुद्रण प्रस्तुति

श्री तिलक राज
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन)
इग्नू, एमपीडीडी

श्री यशपाल
अनुभाग अधिकारी (प्रकाशन)
इग्नू, एमपीडीडी

आरेख

सुश्री अरविन्दर चावला
आरेख डिज़ाइनर
नई दिल्ली

आवरण चित्रण

सुश्री अरविन्दर चावला
आरेख डिज़ाइनर

सितम्बर, 2020

© *इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2020*

ISBN : 978-93-90496-08-2

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस सामग्री के किसी भी अंश को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (चक्र मुद्रण) द्वारा अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के विषय में अधिक जानकारी विश्वविद्यालय के कार्यालय, मैदान गढ़ी नई दिल्ली–110068 से अथवा इग्नू की आधिकारिक वेबसाइट www.ignou.ac.in से प्राप्त की जा सकती है।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से कुलसचिव, एमपीडीडी द्वारा मुद्रित और प्रकाशित।

लेजर टाइप सेट– ग्राफिक प्रिंटर्स, मयूर विहार फेस 1, दिल्ली – 110091

मुद्रण – गीता ऑफसेट प्रिंटर्स प्रा. लि., सी–90, ओखला औद्योगिक क्षेत्र, फेज़–1, नई दिल्ली–20

विषय-वस्तु

		Pages
पाठ्यक्रम परिचय		7
खंड I	**मानव का क्रमिक विकास**	
इकाई 1	प्राक्-इतिहास और स्रोत	17
इकाई 2	मानव का जैविक विकास	34
इकाई 3	पुरापाषाण और मध्यपाषाण संस्कृतियाँ	56
खंड II	**खाद्य उत्पादन**	
इकाई 4	पौधे उगाना और पशु-पालन	83
इकाई 5	विभिन्न क्षेत्रों में आरंभिक कृषि	104
इकाई 6	कृषि के परिणाम	122
खंड III	**कांस्य युगीन सभ्यताएँ**	
इकाई 7	कांस्य युगीन सभ्यताएँः मुख्य विशेषताएँ	139
इकाई 8	मिस्र की सभ्यता	156
इकाई 9	चीन की शांग सभ्यता	175
खंड IV	**लौह युग**	
इकाई 10	लोहे का प्रयोग और उसके निहितार्थ प्रभाव	197
इकाई 11	मध्य और पश्चिम एशिया में खानाबदोश समूह	213
खंड V	**साम्राज्यों का गठन**	
इकाई 12	साम्राज्यों का गठनः असीरियन और बेबीलोनियन	247
इकाई 13	साम्राज्यों का गठनः सासानिद	261
खंड VI	**प्राचीन यूनान**	
इकाई 14	यूनान में लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था	295
इकाई 15	यूनानी सांस्कृतिक परम्पराएँ	323

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

पाठ्यक्रम अध्ययन संबंधी दिशानिर्देश

इस पाठ्यक्रम में हमने अध्ययन सामग्री के प्रस्तुतिकरण का समरूप पैटर्न अपनाया है। यह पाठ्यक्रम परिचय से प्रारम्भ होता है जिसमें कालक्रमानुसार विकास के महत्वपूर्ण चरणों पर प्रकाश डाला गया है। इसमें 6 विशिष्ट अध्याय हैं जिन्हें 15 इकाइयों में बांटा गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए इकाइयों की संरचना एक समान रखी गई है। इकाई के प्रथम भाग, उद्देश्य का प्रयोजन आपको इकाई के अध्ययन से संबंधित विशिष्ट मुद्दों से अवगत कराना है। कृपया इन उद्देश्यों को ध्यान से पढ़िये और प्रत्येक इकाई के भाग को पढ़ने के बाद खुद पुनः उस पर चिन्तन कीजिए। इकाई की प्रस्तावना आपको इकाई की विषयवस्तु से परिचित कराती है तथा आपको इकाई की विषयवस्तु के संबंध में दिशा निर्देश देती है। तत्पश्चात् पाठ्यक्रम की सुगमता के लिए विभिन्न भागों तथा उपभागों में मुख्य विषय की चर्चा की गई है। इकाई के बीच में बोध प्रश्न दिए गए हैं। हमारा निवेदन है कि आप जब भी इन प्रश्नों तक पहुँचे, इन्हें अवश्य पढ़ें तथा हल करें। यह न केवल आपको आपके स्वयं अध्ययन के मूल्याकंन में सहायक होगा, बल्कि इससे आप यह भी जांच सकेंगे कि आपने विषय विशेष को कितना समझा। अपने उत्तर की जांच आप सारांश के बाद दिए गए उत्तर संबंधित मुख्य बिंदुओं के मिलान से कीजिए। प्रत्येक इकाई के अंत में शब्दावली प्रदान की गई है, जिसे इकाई में बोल्ड में दर्शाया गया है। प्रत्येक इकाई के अंत में सदंर्भ ग्रंथ सूची प्रदान की गई है। इस सूची में उन स्त्रोतों तथा ग्रंथों की चर्चा की गई है जो आपके अध्ययन के लिये उपयोगी हैं अथवा अध्ययन सामग्री के निर्माण के दौरान प्रयुक्त किए गए हैं। आप उन पर अवश्य नज़र डालें। हमने कुछ शैक्षणिक वीडियो अध्ययन समझ को बढ़ाने के लिए दिए हैं। कृपया आप इन वीडियो को देखें, यह आपकी संबंधित विषय-वस्तु की व्यापक समझ को बढ़ाने में सहायक होंगे।

पाठ्यक्रम परिचय

मानव की उत्पत्ति उतनी ही प्रभावशाली और महत्वपूर्ण प्रक्रिया थी जितना कि जीवन की उत्पत्ति। हालांकि हम *होमो सेपियन सेपियन्स* एक जैविक प्रजाति के तौर पर अन्य 'नरवानर संबंधियों' से भिन्न हैं। इस पाठ्यक्रम में हमारा उद्देश्य मानव के विकास के क्रम में शिकारी-संग्रहकर्ता से साम्राज्य निर्माता तक, और पर्यावरण और प्रकृति के साथ उनके संबंधों का अध्ययन करना है। क्रम विकास की इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाने में विभिन्न क्षेत्रों में फैले हुए मनुष्यों का योगदान था तथा इसका श्रेय किसी एक क्षेत्र या मानव समूह को नहीं दिया जा सकता। इसलिए इस पाठ्यक्रम को समाज विशेष और विशिष्ट क्षेत्रों के इतिहास के रूप में नहीं बल्कि मानवता के इतिहास के रूप में देखा जाना चाहिए।

यह पाठ्यक्रम मानव क्रम विकास की जानकारी देने वाले विभिन्न स्त्रोतों की विस्तृत चर्चा के साथ शुरू होता है। यहां इन स्त्रोतों के हमारे ज्ञानभंडार को दो भागों में विभाजित किया गया है। इनमें से पहले को आमतौर पर प्राक्-इतिहास के रूप में जाना जाता है जो कि लिखित रिकार्डों या दस्तावेज़ों के उद्भव से पहले का काल था। और दूसरा भाग वह है जब हमें लिखित दस्तावेज़ों और लेखों के साथ-साथ अन्य स्त्रोत भी प्राप्त होने लगते हैं। इसके बाद हम मानव विकास की प्रक्रिया को समझने के लिए आगे बढ़ते हैं। मानव इतिहास की व्यापक समझ मानव जैविक विकास की प्रक्रिया के साथ शुरू होती है। वातावरण की परिस्थितियों में बदलाव ने *होमो* प्रजातियों में बेहतर अनुकूलन क्षमता और द्विपादिता (bipedalism: दो पैरों पर चलने की क्षमता) को विकसित किया। आधुनिक मानव का विकास एक लाख से अधिक वर्षों में कई चरणों के माध्यम से गुजरते हुए आज से करीब 40,000 वर्ष पूर्व प्रजाति *होमो सेपियन* के रूप में हुआ। मानव क्रम विकास केवल जैविक ही नहीं बल्कि सांस्कृतिक बदलावों द्वारा चिन्हित किया गया। इतिहास में पुरापाषाण युग (पच्चीस लाख वर्ष से दस हज़ार वर्ष पूर्व तक) और मध्यपाषाण युग (11,500-5000 बी पी[1]) में विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न संस्कृतियों के साक्ष्य प्राप्त होते हैं। सामान्य ओल्डोवान औज़ारों (तन्ज़ानिया में ओल्डुवाई गॉर्ज के नाम पर नामांकित) के निर्माण के साथ मानव ने श्रेष्ठ उपकरणों का निर्माण शुरू किया। और बचे मृतक पशुओं और फलों को ढूंढ़ने (scavenging) से शुरू करके वह प्रतिष्ठित शिकारी-संग्रहकर्ता के रूप में उभरे। इस घटनाक्रम ने शिकारी-संग्रहकर्ता समाज से नवपाषाण काल (लगभग 12,000-3500 बी सी ई) में एक जटिल खाद्य उत्पादन करने वाली अर्थव्यवस्था में बदलाव को प्रोत्साहित किया।

हर क्षेत्र में यह संक्रमण और उससे जुड़ी प्रथाएं और प्रतिमान समान नहीं थे। उदाहरण के लिए, पश्चिमी एशिया, अमेरिका, चीन और यूरोप की कृषि पद्धतियों की प्रकृति में विविधता थी। कृषि की शुरुआत का बुनियादी चरण पौधे उगाना और पशुपालन करना था। हालांकि हर क्षेत्र में इस संक्रमण का कारण खाद्य उत्पादन नहीं था। कृषि की उत्पत्ति की व्याख्या इतिहासकारों में वाद-विवाद का विषय है जिसमें किसी एक तर्क को सहमति प्राप्त नहीं है। कुछ विशेषज्ञों द्वारा यह माना जाता है कि कृषि के प्रभाव इतने विशाल थे कि वे उसे 'नवपाषाण क्रांति' के नाम से संबोधित करते हैं। भौतिक संस्कृति के विभिन्न स्वरूप, मिट्टी के बर्तनों के निर्माण, अलंकरण, बुनाई की शैलियां और धातु कर्म की तकनीकें विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में उभरीं और विकसित हुईं। इन प्रवृत्तियों ने लोगों के मध्य आर्थिक संपर्कों को बढ़ावा दिया, जिससे साम्रगी के आदान-प्रदान के साथ-साथ उत्साहजनक वैचारिक और सांस्कृतिक आदान-प्रदान हुआ। इस प्रकार जटिल सामाजिक संरचनाओं और सभ्यताओं का उद्भव हुआ।

अध्ययन की सुविधा और प्राचीन दुनिया के सामाजिक तथा सांस्कृतिक पहलुओं को समझने के लिए इस पाठ्यक्रम को 6 खंडों में बांटा गया है। और इसी तरह इन 6 खंडों को 15 उप-विषयों में बांटा गया है, हर उप-विषय को एक इकाई के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

[1] बी पी – बिफोर प्रेजेंट (वर्तमान से पूर्व)

यह पाठ्यक्रम **मानव के क्रमिक विकास** (**खंड I**) के साथ शुरू होता है जो ऐतिहासिक शोध के प्रमुख सरोकार का विवरण यानि अतीत की समझ प्रस्तुत करता है। यहां हमारा प्रयास प्राक्-इतिहास, आद्य-इतिहास, सर्वाधिक प्राचीन ऐतिहासिक लेखन और मानव अतीत की जानकारी के लिए आधुनिक ज्ञान की विभिन्न शाखाओं, विशेष रूप से पुरातत्व और मानव शास्त्र की शाखाएं, की स्पष्ट समझ प्रदान करना है। प्राक्-इतिहास या प्रागैतिहासिक काल उस पुरातन काल को कहते हैं जब लेखन नहीं था और मानव का लेखन या लिखित दस्तावेजों से कोई परिचय भी नहीं था। मानव क्रम विकास की जानकारी प्राप्त करने के लिए जिन प्रक्रियाओं का अनुसरण किया जाता है उनमें पुरातात्विक अन्वेषण के दौरान पाई गई कलाकृतियों और लक्षणों का विश्लेषण शामिल है। इनके अलावा विभिन्न पद्धतियों द्वारा पुरातात्विक अवशेषों का तिथि निर्धारण, उनके गुण और क्षमताओं का अध्ययन भी किया गया है। पिछले कुछ वर्षों में पुरातत्व के क्षेत्र में बहुत उन्नति हुई है। अन्तर्जलीय अन्वेषण जैसी वैज्ञानिक प्रौद्योगिकियों की मदद से जलमग्न स्थलों की खोज भी संभव हो पाई है। तिथि निर्धारण पद्धति के रूप में ताप-उद्भासन (थर्मोलुमिनिसेंस) मिट्टी के बर्तन बनाने वाली प्रागैतिहासिक संस्कृतियों को समझने के लिए एक महत्वपूर्ण पुरातात्विक विधि है (**इकाई 1**)।

मानव के जैविक विकास का अध्ययन पाठ्यक्रम की **दूसरी इकाई** में किया गया है। यह इकाई विस्तार से डार्विन से पूर्व के जैविक विकास के सिद्वांतों के बारे में विश्लेषण करती है जिसमें निर्जीव पदार्थ से सजीव की उत्पत्ति वाले यूनानी सिद्वांतों से लेकर मध्यकालीन सिद्वांतों और जैविक विकास के सिद्धांत शामिल हैं। मध्य 19वीं शताब्दी में चार्ल्स डार्विन ने अपने ग्रंथ *ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़* में जैविक क्रम विकास को परिभाषित किया। विकास के सबसे ज्यादा प्रभावशाली सिद्वांत को नव-डार्विनवादियों ने आगे बढ़ाया जिनके द्वारा प्राकृतिक चयन की अवधारणा का समर्थन किया गया। मानव जैविक विकास के इतिहास में सबसे बड़ी उपलब्धि जीवाश्म (fossil) साक्ष्यों के साथ हुई, जिन्होंने मानव की वानरों से समानताएं और विभिन्नताएं निर्धारित की। अन्य प्रजातिओं के विलुप्त होने और आधुनिक मानव के विकसित होने तक बहुत सी मानव प्रजातिओं ने विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में आवास किया। इनमें से *होमो सेपियन* या 'बुद्विमान मानव' – वह प्रजाति है जिससे आधुनिक मानव संबंधित है। इसीलिए पुरामानवशास्त्रिों द्वारा पाए गए साक्ष्यों और मानव जैविक विकास के विभिन्न सिद्धांतों द्वारा आज से 6,000,000 वर्ष से लेकर 40,000 वर्ष पूर्व की अवधि में विस्तारित मानव जैविक विकास की एक व्यापक समझ विकसित हुई है।

मानव जैविक विकास सांस्कृतिक विकास के साथ भी जुड़ा हुआ है जिसकी चर्चा अगली **इकाई 3** में की गई है। इस इकाई का केंद्र सांस्कृतिक आयामों – औज़ार बनाने की संस्कृति से लेकर कला के भिन्न रूपों तक – पर है, जिनका विश्व में उद्भव हुआ, विशेष तौर पर यूरोप और पश्चिमी एशिया में। मानव विकास के तीन चरणों में से सबसे पहला चरण पुरापाषाण संस्कृति या पूर्व-पाषाण युग था। यह पच्चीस लाख वर्ष पूर्व से लेकर उस समय को समाविष्ट करता है जब मानव ने विशेष रूप से पत्थर के उपकरण या औज़ार बनाने शुरू किए। दूसरी ओर मध्यपाषाण काल, जिसे आमतौर पर नवपाषाण काल की प्रस्तावना के रूप में समझा जाता है, जो उपकरणों के आकार में सूक्ष्मता और विशिष्ट जलवायु परिवर्तनों द्वारा चिह्नत था। मध्यपाषाण काल मनुष्य के सांस्कृतिक अनुकूलन और अधिक स्थायी अस्तित्व, जो आरंभिक पौधे उगाने और जानवरों को पालतू बनाने पर आधारित था, की सबसे अच्छी अभिव्यक्ति है। अतः हम यह मान सकते हैं कि पुरापाषाण काल और मध्यपाषाण काल ने मानव समाज की नींव रखी और एक साधारण शिकार-भोजन संग्रहण करने वाले समाज को नवपाषाण काल की खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं में रूपांतरण के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

अंतिम हिम युग या प्लीस्टोसीन युग के अंत में शिकारी-संग्रहकर्ताओं की भोजन इकट्ठा करने की रणनीति में बदलाव आया (**खंड II**)। आरंभिक प्लीस्टोसीन युग में भीषण पर्यावरणीय

परिवर्तनों की वजह से विश्व के भूगोल में परिवर्तन आया और वनस्पति के चरित्र भी प्रभावित हुए। इसीलिए इन परिवर्तनों से और भोजन की कमी से निपटने के लिए मनुष्य ने अपने आहार की वस्तुओं को विस्तृत किया और वह व्यापक स्पेक्ट्रम अर्थव्यवस्था पर निर्भर हुआ, जिसमें विशेष प्रकार के शिकार, मौसमी संग्रहण, मछली पकड़ना और अन्य गतिविधियां शामिल थीं। विश्व के बहुत से क्षेत्रों में लोगों ने भोजन प्राप्त करने के नए तरीकों की तलाश की। कृषि की शुरुआत की पहली आवश्यकता पौधे उगाना और पशुओं का पालन करना था, जिसकी चर्चा इस पाठ्यक्रम की **इकाई 4** में की गई है।

कृषि की शुरुआत की सही प्रकृति पर पहुंचना बहुत मुश्किल है क्योंकि इतिहासकारों द्वारा कृषि की शुरुआत का कोई एक सिद्वांत स्वीकृत नहीं किया गया है। हालांकि नवपाषाण संक्रमण क्या था और उसके पीछे क्या कारण थे यह प्राक्-इतिहास का सबसे दिलचस्प प्रश्न बना हुआ है। लेकिन यह भी एक तथ्य है कि 6000 बी सी ई तक विश्व की पर्याप्त आबादी नियमित रूप से पशुपालन और खेती संबंधित गतिविधियों से जुड़ चुकी थी। कृषि की शुरुआत के क्रांतिकारी महत्व की वजह से बहुत से विद्वानों ने उसे नवपाषाण क्रांति का नाम दिया। हमें यह ध्यान में रखने की जरुरत है कि हर शिकारी-संग्रहकर्ता अर्थव्यवस्था ने पौधे उगाने और पशुओं का पालन करने की शुरुआत नहीं की थी। बहुत से पुरातात्विक स्थल यह दर्शाते हैं कि विकसित कृषि उत्पादन के बिना भी एक ही स्थान पर बहुत बार बसावटें हो सकती थीं (**इकाई 5**)।

हालांकि पर्यावरणीय परिवर्तन ने कृषि को प्रेरित नहीं किया, परंतु कई स्थानों पर वह प्रवासी तरीकों को प्रेरित करने में एक महत्वपूर्ण कारक था। एक विशाल आबादी के लिए भोजन इकट्ठा करने की रणनीतिओं को अपनाना और उनका पोषण करना इसके अन्य कारक थे। इस दौरान बहुत से परिवर्तनों को देखा गया जैसे कि नए और परिष्कृत औज़ारों का विकास, घर बनाने के बदलते तरीके और अन्य निर्माण, जैसे बाढ़ नियंत्रण निर्माण, प्रकृति के साथ मानव के विविध हस्तक्षेपों द्वारा सिंचाई पर निर्भरता, विस्तृत ग्रामीण बस्तियां, मिट्टी के अद्वितीय बर्तन बनाने की शैलियां, विचारों का स्थानीय अनुकूलन और क्षेत्रों के बीच नियमित रूप से आदान-प्रदान के संबंध। एनातोलिया में स्थित कटालहोयुक, उत्तर नवपाषाण स्थलों में से सबसे विशाल और प्रमुख स्थल है।

एक जटिल समाज और सभ्यता की उत्पत्ति के लिए सबसे पहली आवश्यकता कृषि का संक्रमण था। इस संक्रमण ने विभिन्न मानव समुदायों के आपसी और प्रकृति के प्रति अधिक कठोर रवैये को प्रोत्साहित किया। प्रारंभ में, इसका मानव शरीर क्रिया विज्ञान पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा। मानव आहार और विस्तृत हुआ, और अनाज उनकी भोजन व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण घटक बन गया। इसने लंबी दूरी तक किए जाने वाले व्यापार को बढ़ाया और चीनी मिट्टी के बर्तनों का निर्माण कराया। मानव कपाल का शुभारंभ, जबड़े की हड्डी (जॉलाइन) और आकार और जीवन-अवधि में महत्वपूर्ण परिवर्तन देखे गए। साथ ही मसूड़ों की बीमारियां एक नकारात्मक परिणाम के रूप में उत्पन्न हुईं। इसके फलस्वरूप मानव की वस्तुओं को जांचने-परखने की क्षमता और अवलोकन के गुणों में वृद्धि हुई। अनाज की भरोसेमंद आपूर्ति और संवर्धित भूमि की वहन क्षमता के साथ कृषि आबादी में वृद्धि हुई। कृषक समाज की भूमिकाओं में विभेदीकरण भी संभव हुआ।

व्यवस्था और विवाद, रिश्तेदारी संबंधों, और संसाधनों और काम के बोझ के वितरण से संबंधित नई चिंताएं सामने आईं। इस तरह के प्रतिवाद बहुत से नवपाषाण गांवों में किलेबंदी की उपस्थिति की व्याख्या प्रस्तुत करते हैं। इसी प्रकार ईश्वरीय विश्वास और धर्म के क्षेत्र में नए वैचारिक परिवर्तन दिखाई देते हैं। आरंभिक गांव समुदायों में नई शैली की पूजा प्रणाली – प्रजनन संबंधी अनुष्ठान और पूर्वजों की पूजा – देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए,

समकालीन तुर्की के गोबेल्की तेपे नामक स्थल पर औपचारिक संरचनाएं पाई गई हैं। भौतिक संस्कृति, जैसा कि मिट्टी के बर्तन, वस्त्रों की बुनाई और धातु कार्य में उल्लेखनीय परिवर्तन सुस्पष्ट हैं। साम्रगी शोधन की अन्य विशेषताओं की अपेक्षा मिट्टी के बर्तन, किसी संस्कृति और उससे संबंधित पहलू को पहचानने और उसकी तिथि निर्धारण करने में महत्वपूर्ण पुरातात्विक अवशेषण में मदद करते हैं। इन उत्पादन की वस्तुओं के आदान-प्रदान ने अंत में तांबे और कांस्य के धातुकार्यों के प्रसार को ज्यादातर नवपाषाण युग के स्थलों पर बढ़ावा दिया (**इकाई 6**)।

मनुष्य द्वारा विभिन्न सामग्रियों के प्रयोग के परिपेक्ष में पत्थर के उपयोग से शुरू होकर उसके बाद तांबे और कांसे के इस्तेमाल से अंत में लोहे की तरफ परिवर्तित होता है। 'कांस्य युग' एक ऐसी समय अवधि को दर्शाता है जब उपकरण बनाने के लिए बड़े पैमाने पर कांसे का इस्तेमाल किया जाता था। कांस्य युग की परिभाषा केवल मनुष्य द्वारा इस्तेमाल की गई सामग्री तक ही सीमित नहीं है, वह सभ्यता के रूप में जानी जाने वाली एक खास प्रकार के सामाजिक गठन से भी जुड़ी हुई है। 'सभ्यता' सामाजिक विकास का वह चरण है जो कई विशेषताओं द्वारा चित्रित किया जाता है जैसे कि लेखन प्रणाली, धार्मिक विश्वास प्रणाली, कला के विभिन्न रूप, शिल्प और औज़ारों की उत्पादन तकनीकें। एक विशाल भौगोलिक क्षेत्र में नियमितता से दिखाई देने वाली यह विशेषताएं 'संस्कृति' के रूप में जानी जाती हैं।

एक समय अवधि में किसी विशेष भौगोलिक क्षेत्र में समान कलाकृतियों का संकलन ही संस्कृति कहलाता है। हमें यह याद रखना चाहिए कि विश्व का हर क्षेत्र कांस्य युग से नहीं गुजरा, अपितु बहुत सी सभ्यताएं समानान्तर रूप में अस्तित्व में रहीं। हमने यहां कांस्य युगीन सभ्यताओं की सामान्य विशेषताओं पर चर्चा की है, परंतु इस खंड में केवल मिस्र और चीन के विशिष्ट अध्ययन का प्रयत्न किया गया है (**खंड III**)।

कांस्य युगीन सभ्यताएं विकसित लेखन रूपों द्वारा चिन्हित थीं: मेसोपोटामिया में क्यूनिफार्म शैली, मिस्र में चित्रलिपि और चीन में ओरेकल हड्डी-लेखन। कांस्य युगीन सभ्यताएं सामाजिक स्तरीकरण द्वारा चिन्हित की गई थीं जैसे कि शवाधान तरीकों और लेखन साक्ष्यों से स्पष्ट होता है। उनकी बसावटें नदी घाटियों के आसपास थीं और वह चौथी से दूसरी सहस्त्राब्दी बी सी ई में अस्तित्व में थीं। इन सभ्यताओं की प्रमुख विशेषताओं में शहरीकरण इतना प्रमुख था कि गॉर्डन वी. चाइल्ड ने इस घटनाक्रम को 'शहरी क्रांति' का नाम दिया। कांस्य युग का केन्द्रीय चरित्र शहर था। शिल्प विशेषज्ञता ने लोगों को गतिशीलता प्रदान की। कृषि उत्पादन खेतों की जुताई की तकनीक पर निर्भर था। मौद्रिक अर्थव्यवस्था के अभाव में उच्च विशेषज्ञता व्यवस्थित श्रम विनियोग के जरिये हासिल की गई। इस काल की ज्यादातर जानकारी उस समय के मिथकों और गाथाओं से प्राप्त होती है। उन समाजों में धन शक्ति और प्रतिष्ठा के बीच एक मजबूत संबंध था। शासक निरंकुश व्यक्तित्व के रूप में उभरे जिन्होंने धार्मिक तथा राजनैतिक दोनों सत्ताओं पर अपना नियंत्रण रखा। नगर-राज्यों के बीच संपन्नता ने धर्मनिरपेक्ष शक्ति केंद्रों के उद्भव को अग्रसर किया (**इकाई 7**)। मिस्र में कांस्य युग के दौरान भव्य पिरामिडों का निर्माण किया गया जिन्हें आज भी दुनिया के अजूबों में माना जाता है और उसी के साथ-साथ उन्हें शोषण के एक बड़े प्रतीक के रूप में भी देखा जाता है, क्योंकि वह दासों के परिश्रम के माध्यम से बनाए गए थे। समुद्री व्यापार और मिस्र के लोगों की सामुद्रिक गतिविधियों की उपस्थिति उनके जहाज और नौकाओं के चित्रों में दर्ज की गई है (**इकाई 8**)। उसी समय एक और कांस्य युगीन सभ्यता विकसित हुई जो चीन के क्षेत्र में स्थित थी (**इकाई 9**)। इस क्षेत्र में अद्वितीय और सामान्य कांस्य कास्टिंग प्रौद्योगिकी और कांस्य वस्तुओं के सबसे बड़े संग्रह की प्राप्ति प्रौद्योगिकी का एक चमत्कार माना जाता है। चीन की सभ्यता के प्रारंभिक काल में शांग की विरासत इस पाठ्यक्रम में कांस्य युगीन सभ्यताओं के अध्ययन के महत्व को दर्शाती है।

लौह युग (**खंड IV**) का उद्भव, कांस्य युगीन सभ्यताओं के पतन और खानाबदोश समूहों के आगमन के समकालीन था। कांस्य से भिन्न, जो कि एक कुलीन मिश्रित धातु थी, लोहे के इस्तेमाल ने समाज पर अधिक प्रभाव डाला क्योंकि वह अधिकांश भौगोलिक क्षेत्रों में आसानी से उपलब्ध था। अधिक इस्तेमाल की जाने वाली धातु के रूप में लोहे की तरफ संक्रमण कुछ विद्वानों द्वारा मानव इतिहास में उतना ही महत्वपूर्ण समझा जाता है जितना कि पौधे उगाना और जानवरों को पालतू बनाने की प्रक्रिया। लोहे की क्षमता और उसे उगाने का ज्ञान कृषि, उद्योग और युद्वों के प्रजातंत्रीकरण या आम लोगों तक उसकी पहुँच का कारक माना जाता है। आरंभिक लोहे की वस्तुएं आकस्मिक उत्पाद थीं, समय के साथ लोहा गलाने का ज्ञान विकसित हुआ (**इकाई 10**)। बाद में यूनानियों और ईरानियों ने लोहे को निर्माण के कार्य के लिए इस्तेमाल किया। इस प्रकार लोहा एक बहुमूल्य धातु की बजाय आम प्रयोग की धातु के रूप में उभरा। उस समय का एक और महत्वपूर्ण घटनाक्रम घोड़े को पालतू बनाने की प्रक्रिया और आरा युक्त पहियों वाले रथों का आरंभ था। इसलिए लौह युग के दौरान लोहे से जुड़ी प्रौद्योगिकी के फैलाव के साथ-साथ खेती में कई गुना वृद्वि हुई जिसके कारण कृषि उत्पादन का विस्तार इस युग की एक महत्वपूर्ण विशेषता थी। इसी के साथ-साथ घुड़सवार योद्धा वर्ग, धन, व्यापार और नए शहरों का उद्भव समाज में बदलाव लाया।

11वीं इकाई, लगभग सातवीं सदी बी सी ई से मध्य और पश्चिमी एशिया के मुख्य खानाबदोश समूहों के बारे में चर्चा करती है। मध्य एशिया की अवस्थिति में उसके पर्यावरणीय कारणों और भोजन की खोज में घूमने की वजह ने अंत में खानाबदोश साम्राज्यों की स्थापना के लिए मार्ग प्रशस्त किया। घुड़सवारी ने एक कारक के रूप में इस क्षेत्र में कई शताब्दियों के लिए खानाबदोशों के वर्चस्व में मदद की। घोड़ा और उनके खास टेंट, जो सामाजिक पदानुक्रम के सिद्वांतों पर आधारित थे और *युर्त* के नाम से जाने जाते थे, ने उन्हें गतिशीलता प्रदान की। छठी और सातवीं सदी में हेफ्थेलाइट मध्य एशिया का सबसे शक्तिशाली खानाबदोश समूह था। हालांकि 10वीं और 11वीं सदी तक इस क्षेत्र में सामानिद, सेल्जुक, तुर्क और ख्वारिज्म जैसे शक्तिशाली साम्राज्य उभरे। इन खानाबदोश समूहों के उनके पड़ोसी स्थायी समुदायों के साथ सहयोग और संघर्ष के संबंध थे। हथियारों के इस्तेमाल के कारण उन्होंने अपने पड़ोसी स्थायी समुदायों पर वर्चस्व प्राप्त किया। अरब प्रायद्वीप के आंतरिक क्षेत्र, दक्षिण सीरिया और इराक पर अरब के बद्दू खानाबदोश समूहों का कब्जा था। बद्दू समूहों की उत्पत्ति विद्वानों में प्रतिवाद का विषय है। उनके अरेबिया के स्लेब्स के साथ रिश्तों की चर्चा **इकाई 11** में विस्तार के साथ की गई है। दक्षिण एशिया और यूरेशिया के खानाबदोश समूह पशुधन की परवरिश, पशुओं को चारागाहों में चराने, खानाबदोश समूहों के आवागमन, और विभिन्न प्रकार के शिल्प और युद्व विद्या की विकसित तकनीकों से परिचित थे। उनकी अत्यधिक विकसित सामाजिक संरचना पशुधन के व्यक्तिगत स्वामित्व और चारागाहों के सांप्रदायिक स्वामित्व की दोहरी प्रणाली पर आधारित थी। वह आमतौर पर मरुद्वीपों के आसपास ही बसावट करते थे, यानी कि बसे हुए कृषकों के नजदीक। यह समूह अपने मुखियाओं के नेतृत्व में रहते थे जिन्हें अपने साथी कबीला निवासियों पर अत्यधिक अधिकार प्राप्त थे। खानाबदोश सांस्कृतिक जीवन ने खुद को अत्यन्त जीवन्त रूपों में प्रस्तुत किया। हालांकि कुछ खानाबदोश समूहों ने, जैसे मंगोल, अपनी शक्ति को समेकित कर शक्तिशाली खानाबदोश साम्राज्य का गठन किया।

एक नए राजनीतिक विन्यास, जिसे साम्राज्य के रूप में जाना जाता है, का उद्भव पश्चिमी एशिया के क्षेत्र में हुआ (**खंड V**)। यह साम्राज्य ज्यादातर राजतंत्रीय प्रकृति के थे इनकी साम्राज्यी शक्ति का संचालन भेंट के संग्रह के माध्यम से किया जाता था और उसमें आपस में नातेदारी से संबंधित लोग शामिल होते थे (अपनी जातीय पृष्ठभूमि या आदिवासी संबंधों की वजह से)। इन विशाल साम्राजों ने अत्यंत संगठित व्यवस्थाओं की नींव रखी, जैसे कराधान

प्रणाली, विस्तृत नौकरशाही प्रणाली, कानून व्यवस्था और स्थाई सेना। मेसोपोटामिया के बेबीलोनिया ने साम्राज्य के गठन की प्रक्रिया शुरू की जिसके बाद इस प्रक्रिया का हिट्टियों और असीरियों द्वारा अनुसरण किया गया। यह साम्राज्य बाद के विभिन्न साम्राज्यों के लिए एक मॉडल के तौर पर उभरे, जो कि उस क्षेत्र और अन्य क्षेत्रों में उभरे (**इकाई 12**)। अगली इकाई (**इकाई 13**) सासानिद साम्राज्य, उसके विकास और सुदृढ़ीकरण, प्रशासनिक संस्थाओं, सामाजिक संघटन, अर्थव्यस्था, शहरीकरण, धर्म और साम्राज्य की संस्कृति का विश्लेषण करती है। सासानिद साम्राज्य के काल को पूर्व इस्लामी ईरानी साम्राज्य के स्वर्ण युग के रूप में जाना जाता है। साम्राज्य का प्रारंभ आमतौर पर चौथी और तीसरी सदी बी सी ई में माना जाता है, जब उसकी नींव रखी गई। इसके बाद पतन का काल आया जब हेफ्थेलाइटों ने इस क्षेत्र पर आक्रमण किया। खुसरो के शासन के अधीन, जिसने शासन की विभिन्न प्रणालियों में कई सुधारों की शुरुआत की, साम्राज्य ने काफी ऊंचाईयां प्राप्त कीं और उसके बाद उसके बहुत से उत्तराधिकारी शासकों ने शासन किया। अंततः अरबों ने इस क्षेत्र में आक्रमण किया और इस साम्राज्य के पतन की छाप लगा दी।

पाठ्यक्रम के आखिरी **खंड (VI)** में यूनानी सभ्यता को शामिल किया गया है: भौगोलिक सीमा; विभिन्न स्त्रोत्र; यूनानी समाज की सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था के महत्वपूर्ण पहलू इस इकाई में शामिल किए गए हैं। इनके अतिरिक्त शहरीकरण, भौतिक संस्कृति, यूनानी विश्व दृष्टि, लोकतंत्र की प्रकृति, दास प्रणाली की मौजूदगी और उसकी विरासत पर भी चर्चा की गई है। प्राचीन विश्व की यूनानी सभ्यता एक बदलती हुई भौगोलिक इकाई थी जिसका केंद्र भूमध्यसागर था (**इकाई 14**)। साम्राज्य के गठन के युग में भी यूनानी समाज स्वतंत्र नगर-राज्यों (जैसे एथेंस और स्पार्टा) का समूह था जिसने सभ्यता की एकजुटता को संगठित किया। मायसीनियाई सभ्यता के पतन के साथ तथाकथित 'अंधकार युग' शुरू हुआ जिसमें लंबी दूरी के व्यापार का अंत, शहरों का विनाश और सामाजिक जीवन में विघटन प्रमुख घटनाएं थीं।

यूनानी समाज, अपने सभी तर्कसंगत और सभ्य रूपों के साथ, अन्य श्रमिक प्रकारों के सह-अस्तित्व सहित अनिवार्य रूप से एक दास समाज था। शहर और ग्रामीण इलाकों के बीच एक अद्वितीय संबंध था। अर्थव्यवस्था मजबूत व्यापार नेटवर्क पर आधारित थी, विशेषरूप से तटीय व्यापार क्योंकि कोई भी शहरी राज्य समुद्र से 25 मील से अधिक दूर स्थित नहीं था। भूमिपति वर्ग और किसानों के बीच संघर्ष का रिश्ता था। समाज में महिलाओं की स्थिति अधीनस्थ थी, उन्हें नागरिक नहीं माना जाता था और वह राजनीतिक गतिविधियों में भाग नहीं ले सकती थीं। यूनानी नगर-राज्यों अथवा *पोलिस* के प्रशासनिक संस्थान राजशाही, कुलीन तंत्र और लोकतंत्र का एक मिश्रण थे।

इस पाठ्यक्रम की आखरी **इकाई (15)** यूनानी संस्कृति की विशेषताओं के बारे में गहराई से विश्लेषण प्रदान करती है, पिछली इकाई से अलग जहां पर यूनानी लोकतांत्रिक राज्य व्यवस्था के सामाजिक आधार पर चर्चा की गई है। यूनानी दार्शनिकों ने यूनानी सांस्कृतिक परंपराओं को समृद्धि प्रदान की। उन्हें इस घटनाक्रम की समृद्धि में अपने क्षेत्र के अलावा पूर्वी क्षेत्रों के योगदान के बारे में भी जानकारी थी। इस लंबे युग के दौरान बहुत से विचारक उभरे जिनमें से सुकरात, प्लेटो और अरस्तु आज भी प्रसिद्ध हैं। अरस्तु, जिन्हें पश्चिमी दर्शन का पिता माना जाता है, ने प्राणिशास्त्र, भौतिकी, तत्वमीमांसा और राजनीति के क्षेत्रों में विशिष्ट योगदान दिया और अन्य क्षेत्रों में भी लेखन किया। इस प्रकार यूनानी चिकित्सा और विज्ञान ने ज्ञान के नए भंडार खोले। आज हम जिसे इतिहासलेखन के रूप में जानते हैं यूनानियों को उसके बुनियादी तत्वों की नींव रखने का श्रेय जाता है। हेरोडोटस को विश्व का सबसे पहला इतिहासकार माना जाता है। दूसरी ओर थ्यूसीडाइडिस को पहला वैज्ञानिक मूल्यों पर आधारित इतिहासलेखन का श्रेय प्राप्त है।

यूनानी दर्शन ने मौलिक प्राकृतिक घटनाओं के स्पष्टीकरण का पता लगाया। उन्होंने इन घटनाओं के पीछे की वजह और कारण का अनुमान लगाया। इस चेतना के साथ धार्मिक और पौराणिक मान्यताओं को चुनौती देना मुमकिन हुआ। अंधकार युग, प्राचीन और क्लासिकल यूनान में विशाल मंदिर परिसरों के समुदाय-स्थलों के रूप में उभरने की वजह से सार्वजनिक अनुष्ठान के विस्तारित हुए। उदाहरण के लिए, डेल्फी और ओलंपिया में स्थित मंदिर परिसर। ऐसा कहा जाता है कि नगर-राज्यों को एकजुट रखने में क्षेत्र के लोकप्रिय मिथकों और गाथाओं का योगदान था। यूनानी साहित्य वैश्विक मूल्यों की उपदेशात्मक अभिव्यक्ति को पेश करता है। होमर द्वारा रचित *इलियाड* और *ओडिसी* जैसे महाकाव्य विस्तार से न केवल उस समय के समाज की धारणाओं के बारे में वर्णन करते हैं, बल्कि वह लेखक द्वारा अभिव्यक्त मानव जीवन की धारणाओं को भी व्यक्त करते हैं। कला, वास्तु-कला और मूर्तिकला के क्षेत्रों ने सामूहिक से व्यक्तिगत प्रकृति तक का रास्ता तय किया। शारीरिक शक्ति का प्रदर्शन और खेलकूद अंततः मनुष्य के कौशल के गुणगान, उत्सव मनाने और सराहना के साथ उनके जीवन का एक अनिवार्य हिस्सा बन गए। आधुनिक समय के ओलंपिक खेल भी प्राचीन यूनान से संबंध रखते हैं।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

14 Blank

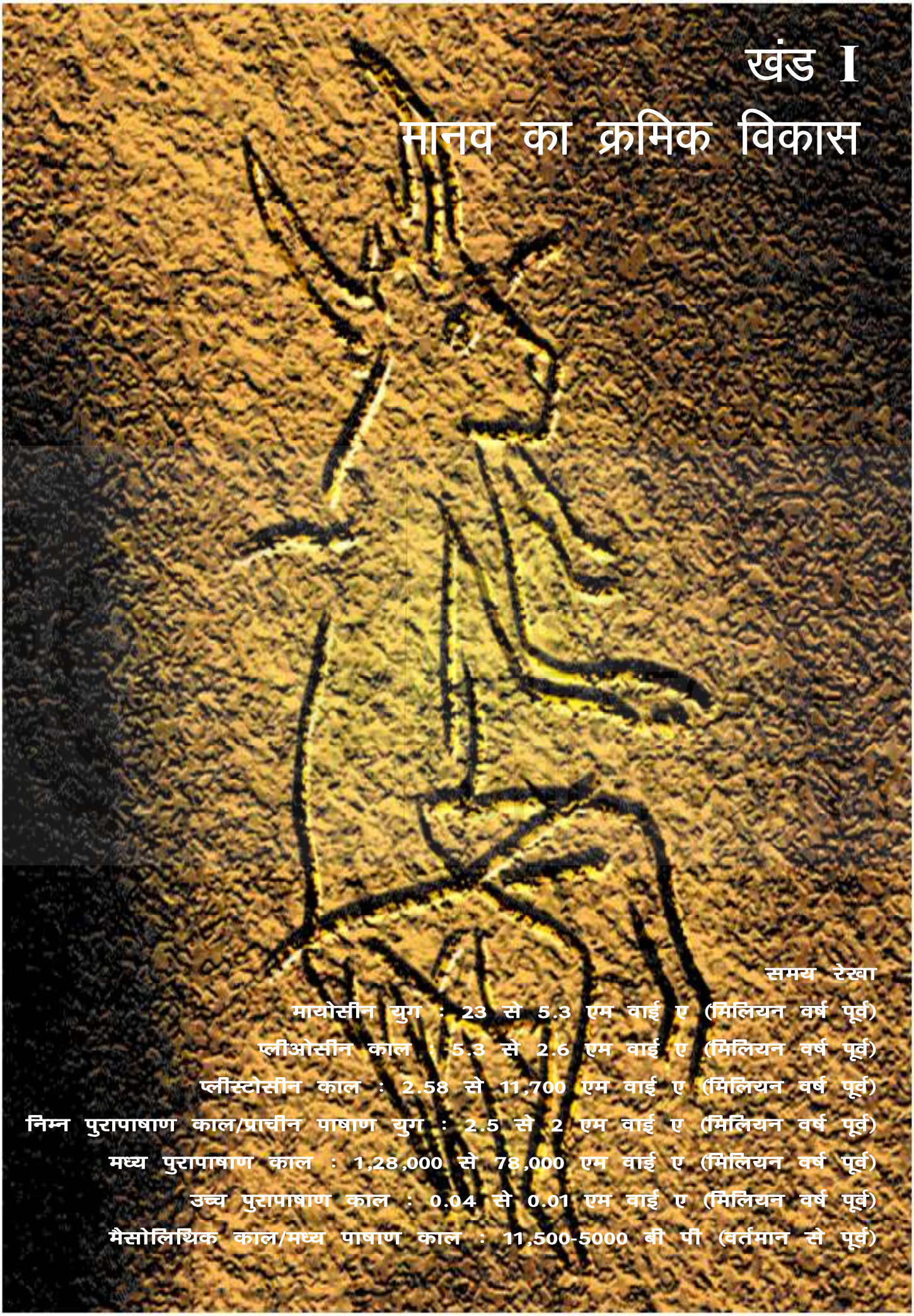

खंड I
मानव का क्रमिक विकास

समय रेखा

मायोसीन युग : 23 से 5.3 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

प्लीओसीन काल : 5.3 से 2.6 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

प्लीस्टोसीन काल : 2.58 से 11,700 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

निम्न पुरापाषाण काल/प्राचीन पाषाण युग : 2.5 से 2 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

मध्य पुरापाषाण काल : 1,28,000 से 78,000 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

उच्च पुरापाषाण काल : 0.04 से 0.01 एम वाई ए (मिलियन वर्ष पूर्व)

मैसोलिथिक काल/मध्य पाषाण काल : 11,500-5000 बी पी (वर्तमान से पूर्व)

चित्रांकनः पुरापाषाण गुफा चित्र, डॉरडोग्न, फ्रांस
फोटोग्राफः लोकुटस बोर्ग, 2007
स्त्रोत : https://upload/wikimedia.org/wikipedia/commons/7/74/Gabillou_Sorcier.png

इकाई 1 प्राक्-इतिहास और स्रोत*

इकाई की रूपरेखा

1.1 उद्देश्य

1.2 प्रस्तावना

1.3 प्राक्-इतिहास क्या है?

1.4 प्राक्-इतिहास संबंधित ज्ञान की शाखाएँ

1.5 पुरातत्त्वविज्ञान का परिचय

1.6 पुरातात्विक शोध के स्रोत और पद्धतियाँ

1.7 पुरातत्त्वविज्ञान में काल-निर्धारण की पद्धतियाँ

1.8 मानवविज्ञान क्या है?

1.9 मानवविज्ञान की शाखाएँ

1.10 सारांश

1.11 शब्दावली

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1.13 संदर्भ ग्रंथ

1.14 शैक्षणिक वीडियो

1.1 उद्देश्य

इस इकाई में हम **प्राक्-इतिहास** और उसके स्रोतों की विवेचना करेंगे। प्राक्-इतिहास लिखित रिकॉर्डों के उद्भव के पहले का काल है। इस इकाई को पढ़ने के पश्चात् आपः

- प्राक्-इतिहास के अर्थ को परिभाषित कर सकेंगे,
- प्राक्-इतिहास, **आद्य-इतिहास** और इतिहास के बीच अंतर को समझ पाएँगे,
- प्राक्-इतिहास के स्रोतों की पहचान कर सकेंगे,
- प्राक्-इतिहास पर शोध की मुख्य धाराओं से परिचित हो सकेंगे,
- पुरातात्त्विक शोध के अर्थ और पद्धतियों की व्याख्या कर पाएँगे,
- मानवविज्ञान शोध के अर्थ और पद्धतियों की खोज को समझ सकेंगे,
- पुरातत्त्व और मानवविज्ञान के बीच अंतर कर सकेंगे, तथा
- प्रागैतिहासिक काल पर शोध संबंधी नयी खोजों को जान सकेंगे।

प्राक्-इतिहास और इसके स्रोतों का अध्ययन उस अतीत की प्रकृति को समझने के लिहाज से महत्वपूर्ण है जहाँ लेखन की जानकारी नहीं थी और कोई लिखित दस्तावेज नहीं थे। यह आपको ऐतिहासिक काल में संक्रमण को पहचानने और उसकी तुलना में सहयोग करेगा।

1.2 प्रस्तावना

ऐतिहासिक शोध का केन्द्रीय उद्देश्य अतीत के ज्ञान की पुनर्प्राप्ति है। इस इकाई में हम प्राक्-

* डॉ. प्रियंका खन्ना, स्कूल ऑफ ह्यूमनटीस एंड सोशल सांइन्सेज़, जी. डी. गोयनका विश्वविद्यालय, गुरूग्राम, हरियाणा

इतिहास का अध्ययन करेंगे – मानव विकास के ऐसे काल में जहाँ लिखित रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं थे। आज प्राक्-इतिहास मानव अनुभव के एक विस्तृत क्षेत्र की तरह पहचाना जाता है। विशेषकर चार्ल्स डार्विन की बुनयादी कृतियों – 1859 में *ऑन द ओरिजिन ऑफ़ स्पीशीज़ बाय मीन्स ऑफ़ नेचुरल सिलेक्शन* और 1871 में *डिसेंट ऑफ़ मैन* – के प्रकाशन के बाद से इसने गंभीर शैक्षिक स्वीकार्यता हासिल की है जिनमें मानव के जीवाश्मी रिकॉर्ड और सभ्यताओं के उद्भव के सारे विश्व में उपलब्ध साक्ष्यों का अपूर्व अभिलेखन हुआ था। तब से प्राक्-इतिहास के बारे में ज्ञान की पुनर्प्राप्ति के लिए सार्थक शोध और पद्धतियाँ विकसित की गयी हैं। यह इकाई प्राक्-इतिहास पर शोध की मुख्य विशेषताओं, स्रोतों और प्रागैतिहासिक काल पर शोधों की महत्वपूर्ण शाखाओं की विवेचना करेगी।

1.3 प्राक्-इतिहास क्या है?

प्राक्-इतिहास, जिसे प्रागैतिहासिक काल भी कहते हैं, उस पुरातन काल की ओर ले जाता है जहाँ लेखन नहीं था और लिखित दस्तावेजों से कोई परिचय भी नहीं था। प्राक्-इतिहास की शुरुआत के संकेत *होमो* जाति (आधुनिक मानव और उनके नजदीकी विलुप्त पूर्वजों से संबंधित – इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** में विस्तारित) के आरंभिक प्रतिनिधियों के उद्भव में है। फिलहाल इस साक्ष्य का काल अफ्रीका में 50-20 लाख साल बी पी, यूरोप और एशिया में करीब दस लाख साल पूर्व, ऑस्ट्रेलिया में लगभग 40,000 साल बी पी और अमेरिका में उससे भी कम है।

वर्तमान से लेकर प्राचीनतम काल (BP, Before Present)

- इस काल मापन का उद्भव 1940 के दशक के अंत में रेडियो कार्बन डेटिंग पद्धति की खोज के बाद हुआ (**भाग 1.7** देखें)।
- इस काल मापन पद्धति में 'वर्तमान', सन् 1950 के लगभग माना जाता है।

लिखित दस्तावेजों के उद्भव के पहले के मानव इतिहास के काल को दर्शाने के लिए फ्रेंच पुरातत्त्वविद पॉल तौर्नल ने 1833 में *पेरिओड एंटी-हिस्टोरिक* (*période anti-historique*) शब्दावली की व्युत्पुत्ति की जिससे 'प्राक्-इतिहास' शब्द की उत्पत्ति हुई (ग्रेयसन, 1983)। फ्रेंच शब्दावली सिमट कर 'प्राक्-इतिहास' हो गई जिसका पहला प्रयोग 1851 में डेनियल विल्सन ने अपनी प्रारंभिक किताब *द आर्कियोलॉजी एंड प्रीहिस्टोरिक एनल्स ऑफ़ स्कॉटलैंड*[1] में किया था। 'प्राक्-इतिहास' शब्द का प्रयोग शुरू में उस काल के लिए हुआ था जब मनुष्य विलुप्त हो चुके प्राणियों के समकालीन थे और जिनके अवशेष **भूगर्भशास्त्रियों** (वैज्ञानिक जो धरती को बनाने वाले ठोस और तरल पदार्थों का अध्ययन करते हैं) और **जीवाश्मवैज्ञानिकों** (जीवाश्मों का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक) को पुरानी भूगर्भी तहों में प्राप्त हुए थे। प्राक्-इतिहास फ़िलहाल लिखित दस्तावेजीकरण के पहले होने वाले मानव के सांस्कृतिक विकास के उस पूरे काल को शामिल करता है जो कम से कम 26 लाख साल पीछे तक फैला है। लिखित रिकॉर्डों के अभाव में **शिल्पकृतियाँ** या भौतिक अवशेष ही प्राक्-इतिहास को समझने के प्राथमिक स्रोत हैं। भौतिक अवशेष अधिकांशतः पत्थर के औज़ारों, पशु-अवशेषों, नृ-जीवाश्मों, जैव-तथ्यों और सांस्कृतिक भू-दृश्यों के रूप में उपलब्ध हैं। इस इकाई के आगे के भागों में इनकी विस्तृत व्याख्या की गई है।

यहाँ यह समझना महत्वपूर्ण है कि प्राक्-इतिहास और सबसे पुराने ऐतिहासिक रिकॉर्डों के बीच अन्वेषकों ने एक संक्रमण काल की पहचान की है जिसे आद्य-इतिहास (proto-history) का नाम दिया गया है। आद्य-इतिहास शब्द का सृजन किसी संस्कृति के अभिलिखित इतिहास की शुरुआत के ठीक पहले उपस्थित काल को बताने के लिए किया गया था। आद्य-

[1] 'प्राक्-इतिहास' शब्द में विस्तृत कवरेज दिया सर जॉन लुब्बौक ने 1865 में प्रकाशित अपनी *प्रीहिस्टोरिक टाइम्सः ऐज इलस्ट्रेटेड बाय एनसिएंट रिमेंस,* एवं *द मैनर्स एंड कस्टम्स ऑफ़ मॉडर्न सैवेजेस* में (एडिन्बर्गः विलियम्स एंड नोर्गेट)।

इतिहास का इस्तेमाल मनुष्यों या इलाकों के उस काल का इतिहास बताने के लिए किया जाता है जब मनुष्य या उस इलाके के बाशिंदे अभी भी निरक्षर थे परन्तु जिनके बारे में जानकारी अधिक उन्नत और पहले से साक्षर पड़ोसियों के लिखित साक्ष्यों में मिलती है। उदाहरण के लिए, बी सी ई चौथी सदी. में ग्रीक और लैटिन इतिहासकारों के सेल्टिक जनजातियों के विषय में लेखन मिलते हैं, जबकि वह जनजाति अभी भी निरक्षर थी (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी*, 1: 95)। 'आद्य-इतिहास' शब्द का इस्तेमाल कई बार ऐसी आबादियों के संबंध में भी किया जाता है जिनके लेखन को अभी तक पढ़ा नहीं जा सका है (जैसे प्राचीन एट्रस्कन भाषा, इटली के लोगों की भाषा, और हड़प्पावासियों की भाषा)।

1.4 प्राक्-इतिहास संबंधित ज्ञान की शाखाएँ

आधुनिक मानवों के उद्भव और क्रमिक विकास का अध्ययन आधुनिक ज्ञान की सभी शाखाओं का केन्द्रीय सरोकार रहा है। भौतिक और जैविक विज्ञानों, चिकित्सा विज्ञानों, भाषावैज्ञानिक अध्ययनों, ललित कलाओं और समाज विज्ञानों की विभिन्न शाखाओं ने विविध पद्धतियों के सहारे मानव अतीत का ज्ञान प्राप्त किया है। इस पाठ्यक्रम में इन सब क्षेत्रों की व्याख्याओं और इनके द्वारा प्रयुक्त स्रोतों की प्रकृति का अध्ययन करना संभव नहीं है। इसलिए हम यहाँ प्राथमिक रूप से समाज विज्ञान के दो क्षेत्रों – पुरातत्त्वशास्त्र और मानवविज्ञान तक खुद को सीमित रखेंगे। यह इकाई इन दो क्षेत्रों के स्रोतों और शोध विधियों की व्याख्या के सहारे मानव के क्रमिक विकास की प्रक्रिया और उनकी संस्कृतियों के बारे में आपको जानकारी देगी।

1.5 पुरातत्त्वविज्ञान का परिचय

पुरातत्त्वविज्ञान अनुसन्धान का वह क्षेत्र है जो भौतिक अवशेषों के अध्ययन के सहारे अतीत का ज्ञान उपलब्ध कराता है। प्राक्-इतिहास के अध्ययन की सबसे पुरानी जड़ें *एंटीक्वारिस* या पुरावशेष-संग्रहियों (वे लोग, आमतौर पर सभ्रांत, जो मुख्यतः पुरानी चीजें इकट्ठी करते थे) के क्रियाकलाप में देखी जा सकती हैं। पुरावशेष-संग्रहियों ने 14वीं और 15वीं सदी के आस-पास यूरोप में पुनर्जागरण (14-17वीं सदी सी ई) और मानवतावाद (14वीं सदी सी ई के उत्तरार्द्ध में विकसित) के काल के दौरान क्लासिकीय पुरातत्त्वविज्ञान के उद्भव का मार्ग प्रशस्त किया।

पुरातत्त्वविज्ञान अतीत में मानवों द्वारा निर्मित और उनके द्वारा पीछे छोड़ी गई चीजों के विश्लेषण द्वारा लिखित भाषाओं के अस्तित्व के पहले के समय का विषद् अध्ययन करता है। ऐसी सामग्रियों के विश्लेषण के द्वारा यह अतीत में लोगों की जिंदगियों की झलक दिखाता है। परन्तु पुरातत्त्वविज्ञान केवल प्राक्-इतिहास की जानकारी ही नहीं देता। वास्तव में यह अध्ययन का ऐसा क्षेत्र है जो मनुष्यों द्वारा आबाद सभी काल अवधियों और भौगोलिक इलाकों को शामिल करता है। शोध की पुरातात्त्विक प्रणालियों के विकास के साथ, पुरातत्त्वविज्ञान व्यक्तियों, परिवारों और समुदायों के जीवन का परिचय भी देता है जो अन्यथा लिखित दस्तावेजों के अभाव में अदृश्य ही रह जाते।

1.6 पुरातात्त्विक शोध के स्रोत और पद्धतियाँ

अतीत की शिल्पकृतियाँ या भौतिक अवशेष प्राक्-इतिहास पर पुरातात्त्विक शोध के प्राथमिक स्रोत हैं। किसी शिल्पकृति का मतलब है 'मनुष्यों द्वारा प्रयुक्त, संशोधित या निर्मित कोई वस्तु' (रेंफ्रू और बान, 2008: 578)। शिल्पकृतियाँ कई रूपों में सामने आती हैं, जैसेः

क) पत्थर के अनगढ़ या सुगढ़ अवशेष जो हज़ारों या लाखों साल पुराने हो सकते हैं
ख) प्रारंभिक किसानों द्वारा उपयोग में आने वाले मृद-भांडों के टुकड़े
ग) टूटी हड्डियाँ
घ) काष्ठ के अवशेष
ड़) बुने हुए वस्त्र

चित्र 1.1: पत्थर के प्रागैतिहासिक औज़ार
ले एइज़ेस दे त्याक, डॉर्डोग्न, फ्रांस में स्थित ले कोम्ब्रल्लेस गुफा से प्राप्त
कालांकन लगभग 12,000-10000 बी पी
साभार: सेम्हर, 2009
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/5f/Prehistoric_Tools_-_Les_Combarelles_-_Les_Eyzies_de_Tayac_-_MNP.jpg

चित्र 1.2: प्रागैतिहासिक गुफा चित्रकारी, लास्कॉक्स, डॉर्डोग्न, फ्रांस
कालांकन 17,000 बी पी
साभार: प्रो. साक्स, 2006
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/1/1e/Lascaux_painting.jpg

'फीचर्स' (features) कहलाने वाली असंवहनीय शिल्पकृतियाँ भी पुरातात्त्विक स्थलों के बारे में सूचना के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। फीचर्स मिट्टी के धब्बों (stains) जैसी चीजों को शामिल करता है जो बताते हैं कि कहाँ किस समय भंडार के गड्ढे, कचरे का ढेर, संरचनाएँ, या बाड़ा आदि स्थित थे। इसी तरह जैव-वस्तुओं (जिसे इकोफैक्ट्स भी कहा जाता है) या पुरातात्त्विक

स्थलों पर मिलने वाले नैसर्गिक अवशेष भी अतीत को समझने में पुराशास्त्रियों की मदद करते हैं। जैव-वस्तुओं में प्राथमिक रूप से जानवरों या पौधों के जैविक अवशेष जैसे पशु हड्डियाँ, पराग कण और लकड़ियाँ शामिल होती हैं जो तत्कालीन आहार और निर्वाह के पैटर्नों के निर्धारण में सहयोग करती हैं। किसी स्थल पर एक या अधिक प्रकार के पुरावशेषों की उपलब्धता उस इलाके की प्राकृतिक संरक्षण की स्थितियों, मौसम और जलवायु पर निर्भर करती है। किसी स्थल पर प्राप्त प्रत्येक वस्तु पुराशास्त्रियों के लिए प्रासंगिक होती है क्योंकि प्रत्येक वस्तु अतीत में मनुष्य के व्यवहार की कोई न कोई सूचना देती है। खंडित रिकॉर्डों से इस व्यवहार की पुनर्रचना वैज्ञानिक कुशलता, अंतर्दृष्टि, और सृजनात्मकता की मांग करती है। इस कारण पुराशास्त्री शोध चरण की एक श्रृंखला का पालन करते हैं जिन्हें नीचे दिए गए बॉक्स में रेखांकित किया गया है।

पुरातात्त्विक अन्वेषण के चरण

1) **शोधः** किसी स्थल की पहचान और अगर कोई पूर्व-शोध हैं तो उसे पढ़कर अन्वेषण के लिए स्थल के महत्त्व को समझना। इस स्तर पर पुराशास्त्री मूलतः स्थानिक पहलूओं में रुचि लेता है।

2) **भूमि की माप-जोखः** शिल्पकृतियों के समूहों/झुण्डों को खोजने के लिए व्यक्तिगत जांच-पड़ताल। इस पद्धति का उपयोग किसी स्थल की अवस्थिति निर्धारण में होता है। स्थल पर मानवीय उपस्थिति और क्रियाकलापों को बताने वाले चिह्नों की पहचान करना।

3) **खड्डे की जांचः** इस चरण में उत्खनन करने वाले स्थल का सांगोपांग सर्वेक्षण करते हैं ताकि अधिकतम शिल्पकृतियों की जगह का पता चले जिसके सहारे स्थल के केन्द्र का निर्धारण हो सके जहाँ पूर्ण **उत्खनन** शुरू किया जा सके।

4) **पूर्ण उत्खननः** पूरे स्थल को उत्खनित करना और साथ-साथ पुराशास्त्रियों द्वारा नक़्शे बनाना, माप लेना और शिल्पकृतियाँ इकट्ठी करना। इस प्रक्रिया में प्राप्त शिल्पकृतियों की सफाई, छँटाई, गिनती और नमूने का रेखांकन भी शामिल है।

   यहाँ इस बात पर ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि किसी पुरातात्विक भंडार से खोजी गयी शिल्पकृतियाँ हमेशा सिलसिलेवार स्तरों या तहों के संदर्भ में मिलती हैं। यह उस स्थल के संस्तरण का निर्माण करती है अर्थात् एक दूसरे के ऊपर स्तरों या तहों का अध्यारोपण। पुराशास्त्रियों द्वारा संस्तरों के अध्ययन को स्तर-विज्ञान कहा जाता है। अध्यारोपण का आधारभूत विचार यह है कि किसी अबाधित सिलसिले में नीचे की तहें ऊपर के मुकाबले पुरानी होती हैं। जब कोई पुराशास्त्री उत्खनित स्थल की विभिन्न तहों की पहचान करता है तो इसे 'अनुभाग-पाठन' कहते हैं। यह किसी स्थल को समझने का अनिवार्य चरण और यथोचित उत्खनन की पूर्वशर्त है। एक पुराशास्त्री को अनिवार्यतः निर्धारित करना चाहिए कि कौन सा स्तर अर्थपूर्ण और कालानुक्रम से उपयुक्त है। विशिष्ट स्तरों की पहचान कई कसौटियों पर निर्भर करती है जैसे स्तर के रंग, मृदा गठन (कंकड़, बजरी, बालू या गाद), बनावट, स्तरों में पाई जाने वाली सांस्कृतिक सामग्रियाँ, इत्यादि।

5) **पुनर्निर्माण और सूचीपत्रणः** पुराशास्त्री शिल्पकृतियों को लेकर प्रयोगशाला में जाते हैं जहाँ प्रत्येक अवशेष की सूची बनायीं जाती है।

6) **विश्लेषणः** इसमें एकत्रित शिल्पकृतियों का वैज्ञानिक अध्ययन होता है। यह अध्ययन इनमें से एक या अधिक सूचनाओं को स्पष्ट करता हैः शिल्पकृतियों का काल, शिल्पकृतियों की सामग्रियाँ, इसके उपयोग, कब-कब इनका उपयोग होता था, आदि।

7) **रिपोर्टिंगः** खुदाई का मुख्य काम अतीत के ज्ञान को हासिल करना और उसका प्रसार करना है इसलिए इस चरण में शिल्पकृति(यों) से एकत्रित ज्ञान प्रकाशन या/और संग्रहालय में प्रदर्शन द्वारा जन-साधारण को उपलब्ध कराया जाता है।

   https://prezi.com/1plupeynwwpv/the-seven-stages-of-archaeology से अंशतः रूपांतरित उत्खनन के बारे में ज्यादा विस्तार के लिए यह वृत्तचित्र देखें;

   'द ऐक्सकेवेशन प्रोसेसः हाउ वी एक्सकेवेट' from https://www.youtube.com/watch?v=PcT1vGyJzygcom/watch?v=PcT1vGyJzyg

   'अनअर्दिंग द पास्ट' from http://www.egyankosh.ac.in/youtubevideo.jsp?src= P4LVNTL8egk&title=Unearthing%20the%20Past

जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है पुरातात्त्विक शोध में पहला और सबसे महत्वपूर्ण कदम है किसी स्थल का चुनाव। पहले स्थल का चुनाव मौखिक परम्पराओं, मिथकीय संदर्भों, मृदा अपरदन या स्तूपों की आकृतियों के द्वारा सतह पर कुछ अवशेष प्राप्त होने से होता था। कई महत्वपूर्ण स्थल संयोग या दुर्घटनावश प्रकाश में आए हैं, मसलन किसी भवन निर्माण के कारण होने वाली खुदाई के दौरान, सड़क या रेल पटरियाँ बिछाने के दौरान या किसी जमीन को जोतते वक़्त। उदाहरण के लिए, हड़प्पा सभ्यता उस समय प्रकाश में आई जब पास में ही रेल पटरियां बिछा रहे कुछ ठेकेदारों ने पास के टीले से ईंटें लाने का निर्णय किया और इसे उजागर किया। और जैसा कि सब जानते हैं, इसके बाद के उत्खनन से भारतीय उपमहाद्वीप की सबसे पुरानी सभ्यता प्रकाश में आई।

आज पुराशास्त्री अतीत में किसी स्थल पर मानव बसाव के प्रमाण या चिह्न हासिल करने के लिए कई प्रकार की वैज्ञानिक पद्धतियों का इस्तेमाल करते हैं। इनमें से खोज की कुछ पुरातात्त्विक पद्धतियाँ हैं:

1) **हवाई फोटोग्राफी**: इस पद्धति में हवाईजहाज, गरम हवा वाले गुब्बारे या ड्रोन से किसी इलाके का हवाई चित्र लेना शामिल है। उच्च परिशुद्धता वाले कैमरे की सहायता से ये हवाई चित्र ज़मीन की सतह पर होने वाले बदलाओं को रिकॉर्ड करने के लिए खींचे जाते हैं। इन फोटोचित्रों की सहायता से मिट्टी के रंगों (मृदा चिह्नों) में अंतर या वनस्पति के विकास (फसल चिह्नों) को भी रिकॉर्ड किया जाता है, जो अधिकतर दफन हुए पुरावशेषों के परिणाम होते हैं। अपनी प्रकृति के कारण यह पद्धति जंगलों के सर्वेक्षण की तुलना में खुले भू-दृश्यों में ज्यादा कारगर है। पुरातात्त्विक शोधों में इस पद्धति का इस्तेमाल 1919 से होता आया है (हवाई फोटोचित्रों के उदाहरण के लिए देखें: ज्योर्ज गेर्स्टर. 2005. *द पास्ट फ्रॉम अबव: एरियल फोटोग्राफ्स ऑफ़ आर्कियोलोजिकल साइट्स.* ऐडिटिड. शार्लोट त्रुम्प्लर, लॉस एंजलस: गेट्टी पब्लिकेशनस)[2]।

चित्र 1.3 : पेरू में स्थित "नाज़्का बन्दर" की हवाई पुरातात्त्विक फोटोग्राफी
साभार: मारिया रीख़, 1953
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/3/3b/Nazca_monkey.jpg

2) **अन्तर्जलीय अन्वेषण या समुद्री पुराशास्त्र**: इस पद्धति का इस्तेमाल समुद्र या मीठे पानी के नीचे पुरावशेषों और जलमग्न स्थलों की खोज में होता है। जहाजों के मलबों की पुनर्प्राप्ति में यह विशेषकर उपयोगी है। इस क्षेत्र में औपचारिक व्यवस्थित जांच, आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता और विशेषकर काउस्त्यु और गैगनन द्वारा 1943 के आस-पास एक्वालंग/जलफेफड़ों (जल के भीतर श्वसन उपकरण जिसने स्कूबा डाइविंग को प्रोत्साहित किया) की खोज से महत्वपूर्ण हो उठी थी। अन्तर्जलीय

[2] हवाई फोटोग्राफी की पद्धतियों और औजारों के बारे में अधिक सूचना के लिए देखें:
https://wwwIjstorIorg/stable/pdf/277280Ipdf?refreqid=search%3A18dOeebe497372be497372b8716ba5ea76ed57f9

टेलीविजन कैमरा और बाथिस्काफ (गहरे समुद्र में निमज्जन-योग्य फ्री-डाइविंग जलयान) अन्तर्जलीय सर्वेक्षण के दूसरे अन्य महत्वपूर्ण उपकरण हैं।[3]

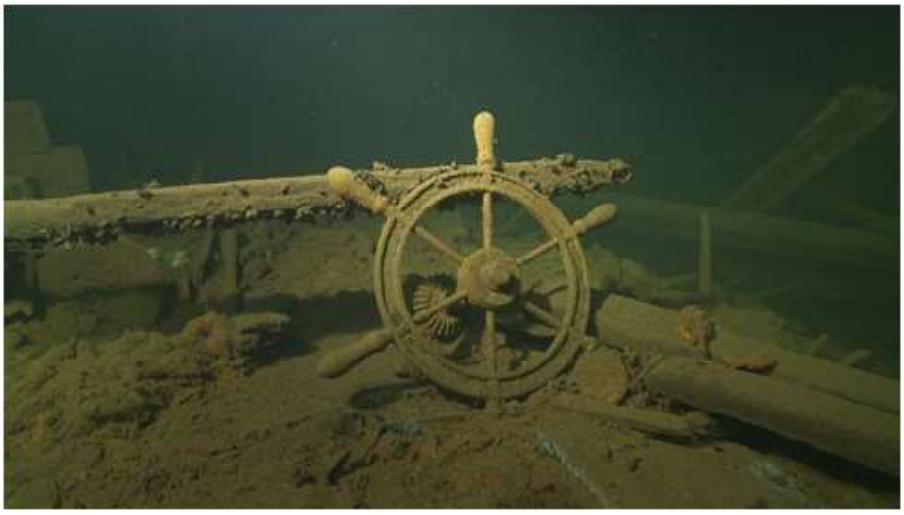

चित्र 1.4 : एस्टोनिया, उत्तरी यूरोप में ब्रिटिश स्टील कार्गो ई-रुसस जलयान के ध्वंसावशेष

साभारः जुहा फ्लिक्मन, सबज़ोन ओ वाई, 2013

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/07/Kaubalaeva_%22E._Russ%22_vrakk.jpg

3) **चुम्बकीय सर्वेक्षणः** इस पद्धति में, जिसे चुम्बकीय-मापशास्त्र या मैग्नेटोमेट्री भी कहा जाता है, इसमें एक भू-भौतिक सर्वेक्षण तकनीक शामिल होती है जो अतीत की मानवीय गतिविधियों को पहचानने और उन्हें परिभाषित करने में सहयोग करती है।

चित्र 1.5: फ्लक्सगेट मैग्नोमीटर

साभारः ज़ुरेक्स, 2008

स्रोतः https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/5/5c/Magnetometr_transduktorowy_by_Zureks.jpg

इसे मृदा, उपमृदा और आधारशिला (bedrock) के चुम्बकीय गुणों में होने वाले दिक्-विषयक स्थानिक परिवर्तनों और विषमताओं के मानचित्रण के जरिये किया जाता है। इस तकनीक का इस्तेमाल घास-भूमियों, फसली खेतों और भूमि के अनावृत (open)

[3] अन्तर्जलीय और मीठे पानी के पुराशास्त्र की विस्तृत चर्चा के लिए देखें:
https://wwwIjstorIorg/stable/pdf//20562008Ipdf?refreqid=search%3A7faa211567c6f4597417b3dfdaa2ce9b;
https://wwwIjstorIorg/stable/pdf//20617994Ipdf?refreqid=search%3A9edb4c1038d9fea98e2889501eb44e48

क्षेत्रों के ऊपर किया जाता है। यह पद्धति विशेष रूप से धातु की वस्तुओं, भट्टियों, चूल्हों, भरे गड्ढों और कुओं, नीवों, मकबरों और दूसरी संरचनाओं की पहचान और परिभाषा में सहायक होती है। कैसियम चुम्बकीयमापक और फ्लक्सगेट ग्रैडियोमीटर फिलहाल पुराशास्त्रीय शोधों में इस्तेमाल होने वाले चुम्बकीय अन्वेषण के प्राथमिक उपकरण हैं। ये उपकरण चुम्बकीय तरंगों का पता लगाते हैं और इस प्रकार किसी शिल्पकृति के काल और उससे सम्बन्धित ज्ञान को उजागर करने में सहायक हैं।[4]

4) **मृदा का रासायनिक विश्लेषणः** यह प्रक्रिया मिट्टी में फॉस्फेट और पोटैसियम की मात्रा निर्धारित करने के काम आती है जिससे प्राचीन काल में मानवीय क्रियाकलापों की उपस्थिति मालूम करने में सहायता मिलती है।[5]

5) **उपमृदा में असंगति की पहचानः** इस पद्धति में पुराशास्त्री पोटेंसीयोमीटर नामक बिजली के एक उपकरण का इस्तेमाल करते हैं जो मिट्टी की प्रतिरोधात्मकता या प्रतिरोधी क्षमता को मापता है। प्रतिरोधात्मकता में विचलन और किसी हद तक असंगति/अनियमितता की पहचान का उपयोग पुरातात्त्विक संरचनाओं जैसे सांस्कृतिक सस्तर, पत्थर की दीवारें, खाइयाँ, कब्रों आदि की संभावित उपस्थिति को निगमित करने में होता है। मसलन, अगर प्रतिरोधी बिजली की धारा की शक्ति या चालकता मिट्टी में घट रही है तो इससे किसी नींव की उपस्थिति का अनुमान होता है। इसी तरह बढ़ी हुई चालकता भरे हुए गड्ढों की सूचना देती है।[6]

6) **ध्वनि या भूकम्पीय पद्धति से अन्वेषणः** इस पद्धति में ज़मीन पर आघात करने से उत्पन्न ध्वनि और कम्पन को रिकॉर्ड किया जाता है। इस पद्धति का इस्तेमाल उन उपकरणों के सहारे किया जाता है जो स्थल की गूँज या अस्थिर-आवृति वाले हर्टज़ियन तरंग के संचरण के उपरान्त परावर्तन, अपवर्तन या अनुनाद से प्राप्त कम्पन संवृति का हिसाब करते हैं। यह पद्धति ख़ास कर पानी में डूबे हुए स्थलों की पहचान और जांच में सहायक है और अन्तर्जलीय अन्वेषण से जुड़कर यह बहुत उपयोगी साबित होती है।

यद्यपि ये सब आधुनिक तकनीकें पुरातात्त्विक शोध के महत्वपूर्ण सहयोगी हैं परन्तु इनके परिणाम केवल सांकेतिक हैं। इसलिए पुराशास्त्रियों के लिए ज़रूरी हो जाता है कि किसी स्थल के उत्खनन का अंतिम निर्णय लेने से पहले उसका भौतिक परीक्षण करें।

जब उत्खनन के दौरान मिलने वाले अवशेषों और शिल्पकृतियों के विश्लेषण की बात आती है तो उसका एक महत्वपूर्ण पहलू यह है कि प्राप्त वस्तु की अवस्थिति का निर्धारण और संरक्षण हो, जिसमें प्राप्त अवशेष की परत (layer) को याद रखना भी शामिल है। अपने स्थल और स्थिति से हटे हुए अलग-थलग पड़ी शिल्पकृतियाँ पुराशास्त्रियों के ज्यादा काम की नहीं होतीं।[7] इस समस्या के निराकरण के लिए पुराशास्त्री स्थल के विभिन्न हिस्सों के विस्तृत नक़्शे और साइट प्लान बनाते हैं। विस्तृत रिकॉर्ड डायरियों और प्राप्ति की अवस्थिति के

[4] इस विधि के विस्तार के लिए देखें, ए. श्मिट. (2007) 'आर्कीआलजी, मैगनेटिक मैथड'. डी. गुब्बिन्स और ई. हरेरो. (संपा.) *एनसाइक्लोपीडिया ऑफ जिओमौनिटिज़्म एंड पैलियोमैगनेटिज़्म. एसाइक्लोपीडिया ऑफ अर्थ साइंसेस सीरीज़.* हाइडलबर्गः स्प्रिंगर, 23-31।
पीडीएफ इस वेबलिंक से डाउनलोड किया जा सकता हैः
https://wwwIresearchgateInet/publication/228666190 Archaeology magnetic methods

[5] इस प्रक्रिया के विस्तार के लिए देखेंः
https://wwwIjstorIorg/stable/pdf/276788Ipdf?refreqid=search%3A3ee2e08b47a983f42563c9254349a44a

[6] इस विधि के बारे में विस्तार के लिए देखें, एन्थोनी क्लार्क, (2003) *सीइंग बिनीथ द सॉयलः प्रोस्पेक्टिंग मेथड्स इन आर्कियोलॉजी.* (न्यूयॉर्कः रूटलेज).

[7] पुराशास्त्रियों और इतिहासकारों के लिए हज़ारों बहुमूल्य चीजें नष्ट हो गयीं क्योंकि मूल स्थल से शिल्पकृतियों को हटाकर चोरों और खनिकों ने उन्हें बेच दिया।

साइट प्लान पर निशानों के रूप में किया जाता है। बिना इन नक्शों, योजनाओं और शिल्पकृतियों तथा संरचनाओं की अवस्थिति के रख-रखाव के कोई भी उत्खनन कारगर नहीं होता। आकार का रिकॉर्ड, सामग्रियों की माप और प्रत्येक प्राप्त वस्तु का भौतिक परीक्षण उत्खनन के अनिवार्य तत्व हैं।

बोध प्रश्न-1

1) प्राक्-इतिहास की व्याख्या लगभग 50 शब्दों में करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) प्राक्-इतिहास और आद्य-इतिहास के बीच क्या अंतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) शिल्पकृति क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) पुरातात्विक शोध के चरण बताएं।

.....

.....

.....

.....

.....

5) पुराशास्त्र के क्षेत्र में हाल-फिलहाल में क्या प्रगति हुई है?

.....

.....

.....

.....

.....

1.7 पुरातत्वविज्ञान में काल-निर्धारण की पद्धतियाँ

किसी उत्खनित वस्तु या स्थल का काल-निर्धारण पुरातात्त्विक शोध का अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू है। शोध प्रक्रिया के इस हिस्से को कालांकन कहा जाता है। लिखित रिकॉर्डों और कैलंडरों के अभाव में जब सही-सही कालांकन की तकनीकें उपलब्ध नहीं थीं, आरंभिक पुराशास्त्रियों के लिए बहुधा कालक्रमिक अनुक्रम का निर्धारण कठिन, लेकिन ज़रूरी कार्यभार था। इसलिए आरंभिक पुराशास्त्रियों का मुख्य ध्यान दिक्-काल के परिप्रेक्ष्य में पुरावशेषों को व्यवस्थित करना था। सालों साल पुराशास्त्रियों द्वारा किसी संस्कृति और शिल्पकृति के वास्तविक या सन्निकट काल निर्धारण के लिए विभिन्न विधियों का इस्तेमाल किया गया है। कुछ बहुप्रयुक्त विधियाँ इस प्रकार हैं:

वृक्षकालानुक्रमिकी (dendrochronology): यह पद्धति वृक्षों में प्रतिवर्ष बढ़ने वाले छल्लों की संख्या और जलवायु के कारण उनकी मोटाई में होने वाले परिवर्तनों के विश्लेषण पर आधारित है। परन्तु वृक्षों की सभी प्रजातियों पर जलवायु परिवर्तन का एक सा प्रभाव नहीं पड़ता जो कि कालांकन की इस पद्धति को सीमित करता है। साथ ही किसी दिए गए इलाके का डाटा किसी दूसरी लघु-जलवायु में स्वतः स्थान्तरित नहीं किया जा सकता। फिर भी वृक्षकालानुक्रमिकी का इस्तेमाल अब तेजी से किया जाने लगा है क्योंकि यह अस्सी लाख साल पुराने लकड़ी के नमूने के कालांकन को भी संभव बनाता है। इस पद्धति का महत्व इस कारण भी बढ़ा है क्योंकि इसके सहारे कालांकन की दूसरी पद्धतियों की परिशुद्धता जाँची जा सकती है, विशेषकर रेडियोकार्बन कालांकन की।

रेडियोकार्बन कालांकन: कार्बन-14 या 14-C के नाम से भी जानी जाने वाली यह पद्धति वैज्ञानिक कालांकन की सबसे प्रचलित पद्धति है। यह पद्धति पदार्थ में नए अणुओं के कॉस्मिक किरण उत्पादन पर आधारित है जिसे रेडियोसक्रिय क्षरण भी कहा जाता है। कार्बन-14 रेडियोसक्रिय क्षरण के पश्चात् नाइट्रोजन-14 में बदलने के पहले औसतन 8300 साल तक रहता है और इस समय के दौरान यह सभी जीवित वस्तुओं के साथ ही सागर-जल और हवा में भी प्रवेश कर जाता है। रासायनिक रूप से कार्बन डाइऑक्साइड जो कि हवा में कार्बन के दहन (जो 20% ऑक्सीजन है) के फलस्वरूप बनता है, समस्त जीवन का आधार है और संभवतः इसी के सहारे नया रेडियोकार्बन सभी जीवों में समान रूप से प्रवेश करता जाता है। किसी पौधे या जानवर के मरने के बाद ही रेडियोसक्रिय क्षरण के सहारे 14-C का उद्ग्रहण कम होने लगता है। अमेरिकी रसायनशास्त्री विलियार्ड लिब्बी ने सबसे पहले रेडियोकार्बन कालांकन की इस पद्धति का उपयोग किया और अनुमान लगाया कि किसी नमूने में 14-C के आधे भाग के अर्द्ध-काल क्षरण में 5568 साल लगते हैं। आधुनिक शोध बताते हैं कि ज्यादा सटीक आँकड़ा 5730 साल है। तथापि, लिब्बी ने पहचाना कि 14-C क्षरण दर या अर्द्ध-काल जानने के बाद किसी नमूने में बचे हुए रेडियोकार्बन की मात्रा की गणना के आधार पर मृत पौधे या जानवरों के ऊतक की उम्र जानी जा सकती है।

लिब्बी की महान् व्यवहारिक उपलब्धि गणना के परिशुद्ध साधनों का तरीका निकालना था। पहले तो 14-C के सुराग ही बहुत कम मात्रा में मिलते हैं और उस पर 5730 साल बाद वह भी आधा रह जाता है। 23,000 साल बाद शुरुआती न्यून सांद्रता का भी केवल सोलहवां

हिस्सा नमूने में बचा रहता है। लिब्बी ने खोजा कि 14-C का प्रत्येक अणु बीटा कणों के निस्सरण द्वारा क्षरित होता है और वह 'गीगर काउंटर' द्वारा इस उत्सर्ग को गिनने में सफल रहा। यह पारंपरिक पद्धति का आधार है और कई रेडियोकार्बन प्रयोगशालाओं में अभी भी प्रयुक्त होता है। पुरातात्त्विक स्थलों से प्राप्त होने वाले नमूनों में साधारणतः जैविक सामग्रियाँ जैसे चारकोल, लकड़ी, बीज, और वृक्षों के अवशेष, और मनुष्य या जानवरों की हड्डियाँ शामिल होती हैं। हालाँकि 14-C पद्धति लकड़ी या चारकोल जैसी चीजें जिसमे कार्बन अंश पाया जाता है उनके काल-निर्धारण के लिए सबसे प्रभावी है लेकिन यह पद्धति उसी स्थल या स्तर से प्राप्त अन्य वस्तुओं (जिसमें कार्बन अंश नहीं है) के काल-निर्धारण में भी उपयोगी है।

किसी नमूने में 14-C क्रियाओं की माप गणना में गलती, पृष्ठभूमि में कॉस्मिक विकिरण, खराब नमूना-चयन, आदि द्वारा प्रभावित हो सकता है। इन सीमाओं के बावजूद, C-14 50,000 से 80,000 साल पुराने जैविक पदार्थों के कालांकन का प्राथमिक साधन है। इस प्रकार प्राप्त काल सामान्यतः वर्तमान पूर्व (बी पी) में अभिव्यक्त किया जाता है (**भाग 1.3** देखें)।

पोटेशियम-आर्गन कालांकनः यह पद्धति, जिसे K-Ar कालांकन भी कहा जाता है, वह इस बात पर आधारित है कि पोटेशियम का एक रेडियोसक्रिय समस्थानिक (K-40) जो चट्टानों और ज्वालामुखी राख में बहुत कम मात्रा में उपस्थित होता है एक ज्ञात दर (किसी दी गयी मात्रा का आधा K-40 लगभग 1.3 बिलियन साल में Ar-40 में बदल जाता है) से आर्गन गैस (Ar-40) में क्षरित हो जाता है। चूँकि Ar-40 एक गैस है अतः जब चट्टान पिघलती है तो वह बाहर निकलती है (जैसे लावा में) लेकिन जैसे ही चट्टान ठंडी होती है वह इसके भीतर फंस जाती है। संवेदनशील उपकरणों की सहायता से जब K-40 और Ar-40 के अनुपात की माप की जाती है तो यह पता लगाना संभव हो जाता है कि किसी चट्टान या राख को ठंडा होने में कितना वक़्त लगा था। चूँकि K-40 का अर्द्ध-जीवन बहुत लम्बा होता है (1.3 बिलियन साल) इसलिए पोटेशियम-आर्गन कालांकन का उपयोग कई मिलियन साल पुरानी सामग्रियों के काल-निर्धारण में किया जा सकता है।

पुराचुम्बकत्वः पुराशास्त्र में इस पद्धति की शुरुआत 1960 के आरंभ से मध्य दशक में डॉ. रॉबर्ट डूबोइस ने किया था। जब विद्युत आवेशित कण गतिमान होते हैं तभी चुम्बकत्व पैदा होता है। यह विधि धरती के चुम्बकीय अवशेषों पर निर्भर है और कालान्तर से विभिन्न चुम्बकीय खनिजों में संरक्षित धरती के चुम्बकीय क्षेत्र के रिकॉर्ड का अध्ययन है।

इसे इस तरह समझा जा सकता है कि जब मृत्तिका गरम होती है तो उसमें स्थित सूक्ष्मातिसूक्ष्म लोहे के कण धरती के चुम्बकीय क्षेत्र के समानांतर एक अवशेषी चुम्बकत्व हासिल कर लेते हैं। ये कण भौगोलिक उत्तरी ध्रुव के आस-पास की उस स्थिति की ओर इशारा करते हैं जहाँ अपनी घूर्णन स्थिति में चुम्बकीय उत्तरी ध्रुव था। एक बार जब मृत्तिका ठंडी हो जाती है तो दोबारा गरम होने तक ये लोहे के कण उस चुम्बकत्व को बनाए रखते हैं। कालांकन की दूसरी विधियों (जैसे वृक्षकालानुक्रमकी या रेडियोकार्बन कालांकन) के इस्तेमाल द्वारा प्राप्त किसी पुरातात्त्विक वस्तु (जैसे चूल्हे) के सटीक काल-निर्धारण और मिट्टी में चुम्बकत्व की दिशा और घूर्णन के माप द्वारा चुम्बकीय उत्तरी ध्रुव की उस समय की स्थिति का पता लगाना संभव है जब वह मिट्टी आखिरी बार जली थी। यह प्रक्रिया आभासी भू-चुम्बकीय ध्रुव या वी जी पी (VGP; वर्चुअल जिओमैग्नेटिक पोल) कहलाती है। पुराशास्त्री कई प्राचीन VGP इकठ्ठा करते हैं और ध्रुवीय घूर्णन का एक संयुक्त वक्र बनाते हैं (जिसे VGP वक्र कहा जाता है)। इस वक्र का इस्तेमाल एक मास्टर रिकॉर्ड की तरह किया जाता है जिसके हिसाब से किसी अज्ञात काल के नमूने के VGP की तुलना द्वारा उसकी तिथि बतायी जाती है।

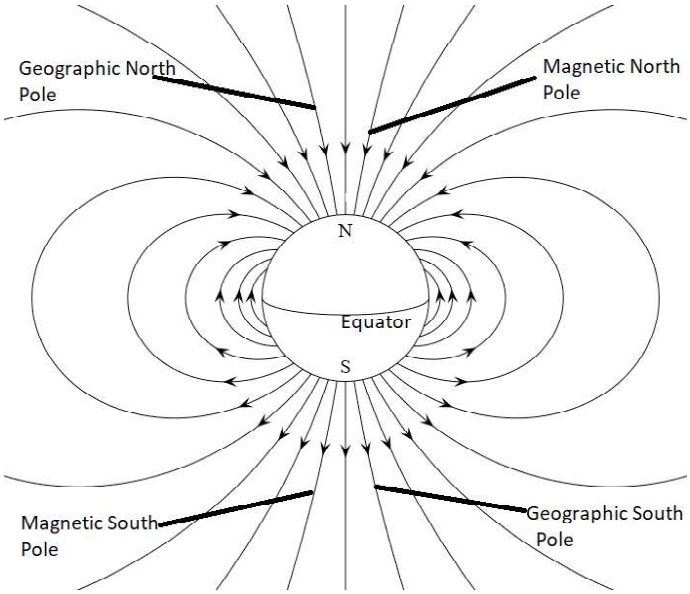

चित्र 1.6: आभासी भू-चुम्बकीय ध्रुव की प्रस्तुति
साभार: गीक3, 2010
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/70/VFPt_Dipole_field.svg से रूपान्तरित

ताप-उद्भासन (Thermoluminiscence; TL): इस विधि का उपयोग मुख्यतः पकी हुई मिट्टी से बनी चीजों के कालांकन में होता है। मिट्टी, जिसमे बर्तन बनाने वाली मिट्टी शामिल है, में मुख्यतः युरेनियम, थोरियम, पोटेशियम और रूबिडीयम आदि के कई प्रकार के नैसर्गिक समस्थानिक शामिल होते हैं जो 'क्वार्ट्ज़' जैसे कुछ खनिजों को प्रदीप्त करते हैं जिससे परमाणुओं का विस्थापन होता है और फिर नियमित अंतराल में वे 'ट्रैप्स' (या रवों के जाल में गड़बड़ी) में संचित हो जाते हैं। जब इन खनिजों को गरम किया जाता है तो 320 डिग्री सेल्सियस पर इनमें संचित ऊर्जा प्रकाश के रूप में निकलती है। जैसे ही ये खनिज ठंडे होते हैं रेडियोसक्रियता के कारण पुनः ऊर्जा संचित कर लेते हैं। उदाहरण के लिए, जब बर्तन का कोई टुकड़ा गरम किया जाता है तो इसमें शामिल 'क्वार्ट्ज़' की संचित ऊर्जा निकलती है लेकिन जैसे ही वह ठंडा होता है क्वार्ट्ज़ पुनः ऊर्जा संचित करना शुरू कर देता है। दूसरी ओर जब बर्तन के टुकड़े को गरम किया जाता है, अतिरिक्त ऊर्जा प्रकाश के उत्सर्जन के साथ मुक्त होती है। इस प्रकाश की तीव्रता संचित ऊर्जा की मात्रा पर निर्भर करती है। प्रकाश का माप प्रयोगशाला की प्रक्रिया में किया जाता है जहाँ ऊर्जा संचय की दर पता चलती है और जिसके आधार पर पुराशास्त्री बर्तन के गरम किये जाने के पश्चात् व्यतीत समय की गणना कर सकते हैं। इस विधि का इस्तेमाल आग में पके चकमक पत्थरों पर भी किया जा सकता है और इस प्रकार यह विधि मिट्टी के बर्तन बनाने से परिचित प्रागैतिहासिक संस्कृतियों के कालांकन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है।

इसके अलावा भी कालांकन की कई विधियाँ हैं, जैसे परमाणु घूर्णन अनुनाद (electron spin resonance), युरेनियम क्रम, फिशन-ट्रैक कालांकन आदि, लेकिन यहाँ हम उनके विस्तार में नहीं जाएंगे क्योंकि पुरातत्वविज्ञान की दृष्टि से या तो इनकी उपयोगिता सीमित है या फिर वे अभी प्रयोगात्मक स्तर पर ही हैं।

बोध प्रश्न-2

1) पुरातत्वविज्ञान में प्रयुक्त सबसे विश्वसनीय कालांकन की पद्धति का नाम बताएं और उसकी व्याख्या करें।

.....

.....

.....

.....

.....

2) निम्नलिखित में से वस्तु के कालांकन की किस विधि का प्रयोग पृथ्वी की सतह के भू-चुम्बकीय क्षेत्र की अवस्थिति पर निर्भर है?

कं) ताप-उद्भासन

ख) पुराचुम्बकत्व

ग) C-14

घ) पोटेशियम-आर्गन कालांकन

3) K-Ar (पोटेशियम-आर्गन) कालांकन क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

1.8 मानवविज्ञान क्या है?

मानवविज्ञान ज्ञान की वह शाखा है जिसमें मनुष्यों और उनकी संस्कृतियों के जीव-वैज्ञानिक क्रम-विकास की खोज की जाती है। मानवविज्ञानी विभिन्न प्रकार के होमोनिड्स, अर्थात् ऐसा समूह जिसमें आधुनिक और विलुप्त मनुष्य और महान् वानर जैसे गुरिल्ला, चिम्पैंज़ी, और ओरंगुटान और उनके सभी निकटतम पूर्वज शामिल हैं, भौतिक विशेषताओं और रूपों में लाखों सालों के दौरान हुए परिवर्तनों के विश्लेषण में सहायता करते हैं। आरंभिक मनुष्यों के सांस्कृतिक पैटर्न, खान-पान, व्यावहारिक पैटर्न्स और संचार की विधियाँ ऐसी दूसरी चीजें हैं जहाँ मानवविज्ञान प्राक्-इतिहास की समझ में हमारी सहायता करता है।[8]

भौतिक अवशेषों के सहारे प्राचीन और नवीन मानव अतीत का अध्ययन करने वाला पुरातत्वशास्त्र दरअसल मानवविज्ञान, जो सभी मानवीय संस्कृतियों का अध्ययन है, का एक उपक्षेत्र है। इसलिए जब एक पुरातत्वशास्त्री किसी शवाधान स्थल का उत्खनन करता है तब उसे किसी मानवविज्ञानी के साथ काम करने की सलाह दी जाती है जो मृतकों की उम्र, लिंग और कद जैसी जनानंकीय प्रकृति की सूचनाएँ दे सकते हैं। पुरातत्वशास्त्र की तरह मानवविज्ञान में भी शोध के कई चरण होते हैं:

1) मानवविज्ञान शोध का पहला चरण यह निर्धारित करना है कि खोजी गयी शिल्पकृति अस्थि है या नहीं।

2) इसके बाद कालांकन की बारी आती है। मानवविज्ञानी अक्सर निक्षेप (deposition) के संदर्भ से किसी कंकाल का संभावित काल निर्धारित करते हैं।

[8] हमें याद रखना चाहिए कि प्राक्-इतिहास के अलावा भौतिक मानवविज्ञान हाल के समय के साथ सरोकार रखता है।

3) शरीर की अवस्थिति, स्थिति, और परिस्थिति के विश्लेषण के सहारे दफनाने के पहले होने वाली संभावित घटनाओं का सुराग मिलता है।

4) अगले चरण में मानवविज्ञानी प्राप्त अस्थि के सहारे उम्र, लिंग, कद और पूर्वज-संबंधी एक जैविक प्रोफाइल बनाने की चेष्टा करते हैं। अस्थि के आकार, प्रकार और संरचना की जांच कर मानवविज्ञानी निश्चित करते हैं कि यह मनुष्य की हड्डी है या जानवर की।[9] कभी-कभी यह मृत्यु का कारण भी स्पष्ट करने में मदद करता है।

5) आगे की व्याख्याएं, जैसे कोई हड्डी क्या संकेत देती है, इसका महत्व और सम्बन्धित विशेषताएँ रिपोर्ट लेखन में विस्तार पाती हैं। यहाँ यह भी जोड़ा जा सकता है कि दफनाई गईं अस्थियों से प्राप्त सूचनाएं असमाधिस्थ (uncremated) अस्थियों के अध्ययन से प्राप्त सूचनाओं के समान हो सकती हैं।

1.9 मानव विज्ञान की शाखाएँ

मानवविज्ञान के अंतर्गत चार मुख्य उप-विभाग शामिल हैं – जैविक मानवविज्ञान, प्रागैतिहासिक मानवविज्ञान, भाषाई मानवविज्ञान और नृजाति विज्ञान जिसे सांस्कृतिक मानवविज्ञान भी कहा जाता है।

i) **जैविक (या भौतिक) मानवविज्ञान** मनुष्यों या लगभग-मनुष्यों के अ-सांस्कृतिक पहलूओं का अध्ययन है। अ-सांस्कृतिक से मतलब उन सब जैविक चरित्रों से है जो, सीखी गयी योग्यताओं के विपरीत, अनुवांशिक विरासत में प्राप्त होते हैं। लगभग-मनुष्य के समान शब्द का प्रयोग वानरों, बंदरों, और आधुनिक मनुष्यों के दूसरे प्राइमेट्स और जीवाश्मी पूर्वजों को दर्शाने के लिए होता है। जैविक मानववैज्ञानिक मानव क्रम-विकास, अनुवांशिक विरासत और विभिन्न पर्यावरणीय परिस्थितियों में मानव भिन्नता और अनुकूलनों की प्रक्रिया की जांच करते हैं।

जैविक मानवविज्ञान के उप-विभाग

मानव जीवशास्त्र	नर-वानरशास्त्र (प्रायमेटोलॉजी)	पुरामानवविज्ञान (पैलियोएन्थ्रोपोलॉजी)
मानवीय विविधता, आनुवांशिक विरासत पैटर्न्स, पर्यावरणीय दबाओं के कारण अ-सांस्कृतिक अनुकूलन और *होमो सेपियंस*, मनुष्य प्रजाति, की जैविक प्रकृति से सम्बन्धित।	प्राथमिक रूप से प्राइमेट्स – हमारे सबसे करीबी जीवित संबंधियों – की क्षमताओं और व्यवहारों को जानना ताकि हमारे आरंभिक मानव पूर्वजों के जीवन को समझा जाये।	आरंभिक मनुष्यों और उनके प्राइमेट पूर्वजों के जीवाश्मी रिकॉर्डों का अध्ययन ताकि मानववंशीय चरणों – आधुनिक मनुष्यों तक उद्भव की प्रक्रिया, जिसे मानवीकरण/होमीनाइजेशन भी कहते हैं – का पता चले।

ii) **सांस्कृतिक (या सामाजिक-सांस्कृतिक) मानवविज्ञान** पूरी दुनिया में मानव समाजों

[9] सभी स्तनधारी एक सामान्यीकृत कंकाल टेम्पलेट साझा करते हैं, इस अर्थ में कि उनके पास लगभग एक ही स्थान पर एक ही हड्डियां हैं: एक खोपड़ी, रीढ़ (जो पूंछ में समाप्त होती है), पसलियां (जो आंतरिक अंगों को आधार प्रदान करती हैं), और पैर की हड्डियों के चार सेट। हालांकि हड्डियों का आकार और जिस तरह से वे एक-दूसरे से संबंधित होते हैं, विभिन्न जानवरों के बीच भिन्न होते हैं। इस प्रकार, एक हड्डी के आकार, आकृति और संरचना की जांच करके, एक मानवविज्ञानी यह निर्धारित कर सकता है कि यह मानव का है या नहीं।

के सांस्कृतिक पहलूओं की जांच करता है। इन पहलूओं में सामाजिक और राजनीतिक संगठन, विवाह पैटर्न्स और रक्त-संबंधी व्यवस्था, निर्वाह और आर्थिक पैटर्न्स, और विभिन्न समाजों की विश्वास व्यवस्था शामिल है। यद्यपि अधिकतर मानवविज्ञान प्राचीन के बदले समकालीन समाजों का अध्ययन करते हैं फिर भी ऐसा करते हुए ये मानववैज्ञानिक अतीत की खो गयी विविधताओं और सांस्कृतिक व्यवहारों की पुनर्पहचान द्वारा प्रागैतिहासिक काल की समझदारी में योगदान करते हैं।

iii) **भाषाई मानवविज्ञान** मानव संचार प्रक्रिया पर ध्यान केन्द्रित करता है। भाषाई मानवविज्ञान मूलतः वाक् संबंधी क्रियाविज्ञान और बोलने तथा लिखने पर सामाजिक और सांस्कृतिक प्रभावों का अध्ययन करते हैं। वे अशाब्दिक संचार और भाषाओं के विकास की जांच भी करते हैं। इस संदर्भ में कुछ मानववैज्ञानिक प्राक्-इतिहास को प्राक्-भाषा अर्थात् शब्दों और आद्य-भाषा के प्राचीन रूप अर्थात् विलुप्त हो गयी भाषाओं के प्राचीन, लेकिन वर्तमान कई भाषाओं के, पूर्ववर्ती रूपों से संबंध की लाक्षणिक व्याख्या करते हैं। इस ऊपर वर्णित क्षेत्र के रूप में ही भाषाई मानवविज्ञान प्राक्-इतिहास – ऐसा काल जिसका कोई लिखित दस्तावेजीकरण नहीं है – को समझने में योगदान देता है।

बोध प्रश्न-3

1) पुरातत्वविज्ञान और मानवविज्ञान में क्या अंतर है?

.....

.....

.....

.....

.....

2) पुरातत्वविज्ञान की विभिन्न शाखाएँ प्राक्-इतिहास को समझने में कैसे योगदान देती हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

1.10 सारांश

इस इकाई के अध्ययन के दौरान आप समझ गए होंगे कि अतीत का ज्ञान केवल लिखित दस्तावेजों से प्राप्त सूचनाओं तक ही सीमित नहीं है। वास्तव में विभिन्न प्रकार के भौतिक अवशेष प्राक्-इतिहास को समझने के महत्वपूर्ण स्रोत आधार का निर्माण करते हैं और शोध की विविध पद्धतियों के सहारे पुरातत्व वैज्ञानिक और मानववैज्ञानिक लगातार प्रागैतिहासिक काल के हमारे ज्ञान के विस्तार में लगे हैं।

इसके अतिरिक्त यहाँ यह भी नोट करना ज़रूरी है कि मानवविज्ञान और पुरातत्त्वविज्ञान, जिनका अध्ययन हमने इस इकाई में किया है, के अलावा पुरावनस्पतिशास्त्र (वनस्पति अवशेषों का अध्ययन), पुराप्राणीशास्त्र (पशु अवशेषों का अध्ययन), चिकित्सा विज्ञान, आणविक रसायनविज्ञान और आनुवांशिकी भी प्राक्-इतिहास और अलग-अलग चरणों में

होमिनिड्स के जैविक क्रम-विकास को समझने में योगदान देते हैं। इन विविध क्षेत्रों के साथ कोशिकाओं में उपस्थित और एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आनुवांशिक चरित्रों के संवाहक डी एन ए (डीऑक्सीरायबो न्यूक्लिक एसिड) का अध्ययन अतीत के शोध में बड़ी उपलब्धि है। इस शोध के उद्‌भव के बाद से वैज्ञानिक दुनिया के अलग-अलग हिस्सों से प्राप्त मनुष्य जाति में संरक्षित कोशिकाओं और मेरु-रज्जु में मिले DNA के अध्ययन कर रहे हैं। उन्होंने एक निश्चित पैटर्न का पता लगाया है जिसके द्वारा लम्बे समयांतराल में डी एन ए बदलता है। इस विधि में दुनिया के अलग-अलग हिस्सों में रहने वाले आधुनिक मनुष्यों, जिसमें वैसे समूह भी शामिल हैं, जो आज अलग-थलग रहते हैं या आखेटक-संग्राहक के रूप में विरल जीवन-यापन करते हैं, उनके डी एन ए की तुलना विभिन्न संस्कृतियों से प्राप्त संरक्षित डी एन ए से की जाती है। इसके साथ ही रक्त समूह, खोपड़ी के आकार-प्रकार, कपाल क्षमता, अस्थि रचना, मांसलता और अंग रूपों के अध्ययन ने आधुनिक मनुष्यों *(होमो सेपियंस सेपियंस)* के जैविक क्रम-विकास के बारे में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान की है। जैविक क्रम-विकास की विस्तृत चर्चा इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** में की गयी है।

1.11 शब्दावली

शिल्पकृति : अतीत में मानवों द्वारा प्रयुक्त, विकृत या निर्मित भौतिक वस्तुएं

उत्खनन : किसी पुरातात्त्विक स्थल की खुदाई या खनन

भूवैज्ञानिक : पृथ्वी पर स्थित ठोस और तरल पदार्थों और उसे बनाने वाली प्रक्रिया का अध्ययन करने वाले वैज्ञानिक

होमीनिन : सभी आधुनिक और विलुप्त मनुष्यों और उनके निकटतम पूर्वजों, विशेषकर चिम्पैंज़ी की अपेक्षा आधुनिक मनुष्यों के ज्यादा करीबी प्रजातियों से बनने वाले समूह का कोई सदस्य

पुराचुम्बकत्व : पुराने समयांतराल में बनी चट्टानों के चुम्बकत्व का अध्ययन। अधिक विस्तार से कहें तो भूवैज्ञानिक कालों के दौरान धरती के चुम्बकीय क्षेत्र में होने वाले बदलावों का अध्ययन

जीवाश्मशास्त्री : वैज्ञानिक जो जीवन की शुरुआत और विकास के इतिहास तक पहुँचने के लिए जीवाश्मों का अध्ययन करते हैं

प्राक्-इतिहास : ऐसा काल जिसका कोई लिखित दस्तावेज हमारे पास नहीं है और जिसकी जानकारी का स्रोत पुरावशेष हैं

आद्य-इतिहास : प्राक्-इतिहास और इतिहास के बीच का काल जिसके दौरान कोई संस्कृति या सभ्यता लेखन का विकास नहीं कर पाई थी परन्तु जिसकी उपस्थिति के बारे में दूसरी संस्कृतियों के लेखन में उल्लेख मिलता है

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 1.3 देखें

2) काल जिसमे कोई लिखित रिकॉर्ड नहीं है बनाम संक्रमण का काल। भाग 1.3 देखें

3) अतीत के भौतिक अवशेष। भाग 1.6 देखें

4) भाग 1.6 में बॉक्स में दी गयी जानकारी देखें

5) हवाई फोटोग्राफी अन्तर्जलीय अन्वेषण, इत्यादि। भाग 1.6 देखें

बोध प्रश्न-2

1) 14-C; भाग 1.7 देखें

2) विकल्प ख, भाग 1.7 देखें

3) पोटेशियम-आर्गन कालांकन। भाग 1.7 देखें

बोध प्रश्न-3

1) भौतिक अवशेषों के द्वारा मानव अतीत का अध्ययन बनाम अस्थि अवशेष के सहारे मानव संस्कृति का अध्ययन। भाग 1.8 देखें

2) मानव विकास, सांस्कृतिक व्यवहार, पुरा/आद्य भाषाओं को समझना, इत्यादि। भाग 1.9 देखें

1.13 संदर्भ ग्रंथ

अग्रवाल, डी.पी. और ए. घोष (संपा.). 1973. *रेडियोकार्बन और भारतीय पुरातत्व.* बॉम्बेः टाटा इंस्टीट्यूट ऑफ फंडामेंटल रिसर्च.

बर्नार्ड, एलन. 2016. *द एवोल्यूशन ऑफ़ लैंग्वेजः ऐन एंथ्रोपोलोजिकल अप्रोच लैंग्वेज इन प्रीहिस्ट्री.* कैम्ब्रिजः कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस.

क्लार्क, अन्थोनी. 2003. *सीइंग बिनीथ द सोश्लः प्रॉस्पेक्टिंग मेथडस इन आर्कियॉलाजी.* न्यू एडिशन, न्यूयार्कः रुटलेज.

क्लार्क, जे.डी.जी. 1965. 'रेडियोकार्बन डेटिंग एंड एग्रीकल्चर इकॉनमी'. *एंटीक्विटी*, 39:45-48.

कुलकर्णी, ए. सी. 2015. 'ऑफशोर टेक्नालॉजी एंड मैरीन आर्किओलॉजी', ए.एस गौड़ और सुंदरेश (संपा.) में. *रीसेंट रिसर्चेज़ ऑन इंडस सिविलाइज़ेशन एंड मैरीटाइम आर्किओलॉजी इन इंडिया,* दिल्लीः आगम कला प्रकाशन.

लाएट, एस.जे. डे (संपा.), ए.एच. डेनी, जे.एल लोरेन्जो गीइज़्टर और आर.बी. नूनू (सह-संपा.) 1996. *हिस्ट्री ऑफ हयूमेंनिटी,* भाग 1 *: प्रीहिस्ट्री एंड द बिगनिंग ऑफ सिविलाइज़ेशन.* यूनेस्को. लंदनः रूटलेज.

लुब्बॉक, जॉन. 1865. *प्रीहिस्टोरिक टाइम्सः एज इलस्ट्रेटेड बाय एनसिएंट रिमेंस, एंड द मैनर्स एंड कस्टम्स ऑफ़ मॉडर्न सेवेजेस,* एडिनबर्गः विलियम्स और नॉर्गेट.

रेंफ्यु, सी. एवं पी.बान. 2008. *आर्किओलॉजीः थ्योरीस, मेथड्स एंड प्रैक्टिसेज,* लंदनः थाम्स और हडसन.

श्मिट, ऐ. 2007. 'आर्किओलॉजी, मेग्निटिक मेथॅडस', डी., गबिन्स एवं ई. हेरेंरो-बर्वेरा (सपा.)'. *एन्साइक्लोपीडिया ऑफ ज़िओमैगनटिज़्म एंड पैलियोमैगेनटिज़्म एन्साइक्लोपीडिया ऑफ अर्थ सांइसेज़ सीरीज़.* हाइडेलबर्ग, न्यूयार्कः स्प्रिंगर : 23-31.

पी डी एफः

https://www.jstor.org/stable/pdf/20079007.pdf?refreqid=search%3Af78cba054579b0acebd3139146894353

https://www.jstor.org/stable/pdf/25801250.pdf?refreqid=search%3Af78cba054579b0acebd3139146894353

https://www.jstor.org/stable/pdf/3557110.pdf?refreqid=search%3Ab59fb18f38ce92f6c891da4a5d3d0a25

https://www.jstor.org/stable/pdf/40366435.pdf?refreqid=search%3A3358b0b6bd28ac026724dc6965d34953

https://www.jstor.org/stable/pdf/24950591.pdf?refreqid=search%3A1d0fc6dd47257518fe616ac6f2f904f7

https://www.jstor.org/stable/pdf/3024893.pdf?refreqid=excelsior%3A44638ad7fb36c31784cc9f708821de2b

https://www.jstor.org/stable/pdf/73915.pdf?refreqid=excelsior%3Af23c3833695fc94278db8240d22ba613

1.14 शैक्षणिक वीडियो

डेटिंग-द रेडियोकार्बन वे
https://www.youtube.com/watch?v=-xKvq6VLe4s

द एक्सकेवेशन प्रासेसः हाउ वी एक्सकेवेट
https://www.youtube.com/watch?v=PcT1vGyJzyg

अंडरवाटर आर्कीओलाजी
https://www.youtube.com/watch?v=qgCvnogeN2s

स्पेस आर्कीओलाजीः ए न्यू फ्रंटियर ऑफ एक्सप्लोरेशन
https://www.youtube.com/watch?v=gxD32LRC1QE

इकाई 2 मानव का जैविक विकास*

इकाई की रूपरेखा

2.1 उद्देश्य

2.2 प्रस्तावना

2.3 क्रमिक विकास के सिद्धांत

2.3.1 डार्विन पूर्व क्रमिक विकास के सिद्धांत

2.3.2 डार्विन का सिद्धांत

2.3.3 क्रमिक विकास का कृत्रिम (सिंथेटिक) सिद्धांत

2.4 होमीनाईज़ेशन

2.4.1 द्विपादिता

2.4.2 एनसेफ्लाईज़ेशन

2.4.3 लैंगिक द्विरूपता

2.4.4 अन्य कारक

2.5 मानव का जैविक विकास

2.5.1 पूर्व मानव

2.5.2 मानव प्रजाति का जैविक विकास

2.6 सारांश

2.7 शब्दावली

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

2.9 संदर्भ ग्रंथ

2.10 शैक्षणिक वीडियो

2.1 उद्देश्य

यह इकाई मानव के क्रमिक विकास का वर्णन करती है। इस इकाई के पठन के बाद, आपः

- मानव के क्रमिक विकास का वर्णन कर सकेंगे,
- विकास से संबंधित विभिन्न प्रकार के सिद्धांतों की तुलना और मूल्यांकन कर पाएँगे,
- क्रमिक विकास को समझने में डार्विन के योगदान का विवरण दे सकेंगे,
- मानव के जैविक विकास में जीवाश्म कैसे सबसे बड़ा साक्ष्य है इसका आंकलन कर सकेंगे,
- वानर और मानव के मध्य अंतर को पहचान सकेंगे, तथा
- वानर का मनुष्य (*होमो सेपियंस*) में रूपांतरण का विवरण दे सकेंगे।

* प्रो. रश्मि सिन्हा, मानवविज्ञान संकाय, सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ, इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

2.2 प्रस्तावना

हॉल और हालग्रिमसन (2008) ने क्रमिक विकास को 'जन समुदाय के क्रमबद्ध पीढ़ियों के बीच पैतृक विशिष्ट लक्षणों में परिवर्तन के रूप में परिभाषित किया है'। हरर्बट स्पेंसर, एक अंग्रज़ी दार्शनिक, ने 1862 में सबसे पहले 'क्रमिक विकास' शब्द का प्रयोग जीवन के ऐतिहासिक विकास को संबोधित करने के लिए किया। विकास जीवाश्म के अंदर एक क्रमिक परिवर्तन है। यह परिवर्तन जब एक समयावधि के दौरान होता है तो वह 'सूक्ष्म विकास' और जब इसका संबंध एक से दूसरे में परिवर्तनों के रूपांतरण से होता है तो उसे 'वृहत-विकास' कहा गया। मानव विकास के अध्ययन में चार्ल्स डार्विन, जो एक महत्वपूर्ण नाम है, ने क्रमिक विकास को 'वंश में रूपांतरण' कहा जिससे तात्पर्य है कि अपने उत्तराधिकार के कारण निकटतम सम्बंधित प्रजाति एक दूसरे के सदृश हैं; और अपने पूर्वजों के पृथक्करण के दौरान पैतृक भिन्नताओं के कारण एक दूसरे से भिन्न हैं।

मानव के क्रमिक विकास की चर्चा प्रारंभ करने से पूर्व, इस क्रमिक विकास की प्रक्रिया के बारे में दिए गए विभिन्न सिद्धांतो को समझ लेते हैं।

2.3 क्रमिक विकास के सिद्धांत

विकासमूलक विचारधारा का विस्तार अरस्तु के शास्त्रीय सिद्धांत से लेकर क्रमिक विकास के आधुनिक कृत्रिम सिद्धांत तक है। ये सिद्धांत जीवन के क्रमिक विकास और उसकी विविधता पर आधारभूत ज्ञान प्रदान करते हैं। ये क्रमिक विकास के आधुनिक सिद्धांत के अस्तित्व में आने तक के क्रमबद्ध चरण भी निर्धारित करते हैं।

2.3.1 डार्विन पूर्व क्रमिक विकास के सिद्धांत

चार्ल्स डार्विन वैज्ञानिक के तौर पर जाने जाते हैं जिन्होंने विकासमूलक सिद्धांत को बदल दिया और एक ऐसे ठोस आधार की स्थापना की जिस पर क्रमिक विकास का अध्ययन किया जा सके। हालांकि, डार्विन से पूर्व भी अनेक सिद्धांत प्रस्तुत किए गए जिन्होंने वास्तव में विकासमूलक विचारधारा की वृद्धि के मार्ग को प्रशस्त किया। यूनानी विचारकों के प्रारंभ से लेकर लायल के सिद्धांत तक, ये डार्विन पूर्व सिद्धांत बताते हैं कि डार्विन से पहले शोधार्थियों द्वारा क्रमिक विकास को किस तरह समझा गया।

यूनानी सिद्धांत

यूनानी दार्शनिकों, जैसे कि अरस्तु (384-322 बी सी ई), हेरोडोटस (484-425 बी सी ई) और एम्पिडोक्लेस (504-433 बी सी ई) विकास की विचारधारा के पथ प्रदर्शक रहे। उनका विश्वास था कि जीवन स्वरूपों की निरंतरता ही उसे नूतन स्वरूपों में बदलती है। अरस्तु का मानना था कि संघटित शरीर रचनाओं की एक विशिष्ट आंतरिक सहज प्रवृति होती है जो उन्हें रूपांतरण के दौरान बेहतर प्रयास करने में सक्षम बनाती है। उन्होंने यह क्षमता पौधों, जानवरों और मनुष्यों सभी में पाई। मनुष्यों में अंतर्दृष्टि पर सर्वप्रथम प्रकाश डालने वाले के रूप में अरस्तु को मानवविज्ञान अर्थात मानव जीवन के अध्ययन की अवधारणा के अविष्कार का श्रेय भी जाता है (अधिक जानकारी के लिए इस पाठ्यक्रम की **इकाई 1**, **भाग 1.8** देखें) और इसीलिए वे 'मानवविज्ञान के पितामह' के तौर पर जाने जाते हैं।

हेरोडोटस और एम्पिडोक्लेस ने भी जीवित प्राणियों और उनके जैविक क्रमिक विकास से सम्बंधित विशेष विचारधारा को विकसित किया। इन दर्शिनिकों के विचार रूपांतरण की अवधारणा की ओर संकेत करते हैं; वनस्पति का जानवरों से पहले विकसित होना, और अंततः मानव का क्रमिक विकास उच्च संघटित शरीर रचना के क्रम को दर्शाता है। **सहज वृत्ति**

का सिद्धांत अथवा जीवोत्पत्ति के नाम से पहचाने जाने वाले इस सिद्धांत का मत है कि जीवन की उत्पत्ति निर्जीव और अजैविक तत्वों से होती है, जैसे कि खाद, ओस, सड़ा हुआ चिपचिपा कीचड़, सूखी लकड़ी, और पसीना इत्यादि। अरस्तु, थेल्स (लगभग 624-546 बी सी ई), प्लेटो (लगभग 423-347 बी सी ई) और वॉन हेलमोंट (1580-1644 बी सी ई), आदि वैज्ञानिक भी 17वीं शताब्दी तक जीवोत्पत्ति की विचारधारा के समर्थक थे। 17वीं शताब्दी के मध्य में यह सिद्धांत फ़्रांसिस्को रेडी, स्पैलानज़ानी और लुई पास्चर के द्वारा अप्रमाणित करार दिया गया।

मध्यकालीन युग के सिद्धांत

मध्यकालीन युग, जो यूरोपीय जगत में 'ईसाई युग' के नाम से भी प्रसिद्ध है, ने यूनानियों के क्रमिक विकास के सिद्धांत का खंडन किया। मध्यकालीन युग में **विशिष्ट सृष्टि के ईसाई सिद्धांत** का वर्चस्व था। इस सिद्धांत के अनुसार धरती पर समस्त क्रियाशील जीवों की रचना दैवीय शक्ति द्वारा छः दिन में की गई थी। स्पेनिश पादरी, **फादर सुआरेज़** (1548-1671) इस सिद्धांत के प्रबल समर्थक थे। चूंकि समस्त क्रियाशील जीवों की रचना दैवीय शक्ति द्वारा की गई थी, वे उत्पत्ति के दिन से लेकर अब तक अपरिवर्तनीय और स्थायी हैं। इस सिद्धांत का अनुकरण 19वीं शताब्दी के मध्य तक हुआ।

वर्तमान स्थिति की शाश्वतता सिद्धांत सृष्टि की अपरिवर्तित प्रकृति के तर्क में विश्वास रखता है। इस सिद्धांत का मानना है कि जीव अपने विशिष्ट अस्तित्व के शुरू से अंत तक अपरिवर्तनीय रहता है और अनन्तकाल तक उसी तरह अपरिवर्तनीय अवस्था में रहेगा।

जैविक विकास के सिद्धांत

मध्य 18वीं शताब्दी में जीवों पर हुए जीव विज्ञान के विकास ने विज्ञान जगत में क्रांति ला दी। इस काल में स्वीडन के वनस्पति वैज्ञानिक **कार्ल लिनियस** (1707-1778) ने अपनी अमर कृति 'सिस्टमा नेचुरई' (1735) प्रकाशित की। लिनियस ने सर्वप्रथम प्रत्येक क्रियाशील जीव को दो दोहरे नामकरण के साथ निर्दिष्ट किया, और प्रत्येक जीव को दो लेटिन नाम दिए, एक वंश और दूसरा प्रजाति के लिए। इस प्रकार, लिनियस के समय से, वैज्ञानिक दृष्टि से मानव प्रजाति होमा-सेपियन्स के तौर पर पहचानी जाती है।

18वीं शताब्दी के अंत में, फ्रांसीसी वैज्ञानिक, **कोम्टे डे बफ़न** (1707-1788), जो कार्ल लिनियस के समकालीन थे, ने तर्क दिया कि जीवन के स्वरूप निर्धारित और स्थाई नहीं हैं। उनका विश्वास था कि जीवों के क्रमिक विकास पर पर्यावरण का बहुत गहरा प्रभाव रहा है।

तदोपरान्त, **इरास्मस डार्विन** (1731-1802), 18वीं शताब्दी के एक अन्य विकासवादी वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन के दादा, ने अपने शोधों के माध्यम से जानवरों की विकासमूलक अवस्था पर प्रकाश डाला और दृढ़ता से दावा किया कि धरती और इस पर जीवन अवश्य ही लाखों वर्षों से विकसित हो रहे हैं और इस श्रेणी में मानव जीव का क्रमिक विकास नवीनतम है।

लेमार्क (1744-1829), एक फ्रांसीसी प्रकृतिवादी, प्रथम विकासवादी वैज्ञानिक थे जिन्होंने विश्वास के साथ जीवों में जैविक परिवर्तन की प्रमुख प्रक्रिया के बारे में विचार को आगे बढ़ाया। उनका यह सिद्धांत 'गुणों का पैतृक अभिगृहण' के नाम से जाना जाता है और यह नई प्रजाति की उत्पत्ति का विवरण प्रदान करता है। लेमार्क, जो जानवरों के श्रेणी विभाजन में विशेषज्ञ थे, ने जाना कि विभिन्न प्रजातियाँ एक सुव्यवस्थित सम्बंध के अनुरूप हो सकती हैं जिसने जीवन के सबसे सरल छोटे रूप में जटिल मानव के सतत वंशानुक्रम को क्रमबद्ध किया। वे प्रथम प्रकृतिवादी थे जिन्होंने यह विश्वास दिलाया कि जानवर अपने को पर्यावरण

के अनुकूल ढालने के लिए अपने आप को परिवर्तित करते हैं। अपने सिद्धांत में उन्होंने दर्शाया कि ये प्रजातियां अपरिवर्तनीय नहीं थीं, बल्कि पूर्ववर्ती प्रजातियों से उत्पन्न हुई थीं। उन्होंने सुझाव दिया कि एक जीव का ढांचा उसके कार्य पर निर्भर करता है। इसके लिए उन्होंने जिराफ के उदाहरण का प्रयोग किया, और व्याख्यायित किया कि उसकी लंबी गर्दन का ढांचा उसके द्वारा अपनी गर्दन के निरंतर प्रयोग और पेड़ों के सबसे ऊँचे पर्ण समूहों तक पहुँच सकने के प्रयास के कारण हुआ। इस विचार के आधार पर, उन्होंने निम्नलिखित चार तत्वों के आधार पर एक सिद्धांत स्थापित कियाः

1) अंगों का प्रयोग और अनुप्रयोग

2) अभिगृहीत विशिष्टताओं का वंशानुगत होना

3) आंतरिक प्रेरणा

4) प्रत्यक्ष वातावरण और नई इच्छाएं

उनके अनुसार, जिराफ की लंबी गर्दन एक अभिगृहीत विशिष्टता थी जिसे अगली पीढ़ी द्वारा विरासत में प्राप्त किया गया। इसी प्रकार सांप का लचकदार शरीर बिल में रहने के कारण उसके अनुपयोगी अवयवों का परिणाम था।

दुर्भाग्यवश, लेमार्क का 'गुणों के पैतृक अभिगृहण' का सिद्धांत वैज्ञानिक समुदाय के बीच तर्कसंगत सिद्ध नहीं हुआ क्योंकि वह सभी प्रश्नों के समाधान के लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रस्तुत नहीं करता। फिर भी, लेमार्क का क्रमिक विकास का सिद्धांत विकासमूलक जीवविज्ञान में एक मील का पत्थर है।

जार्ज क्यूवियर (1769-1832) एक अन्य फ्रांसीसी वैज्ञानिक हैं जिन्होंने लेमार्क के क्रमिक विकास के सिद्धांत का दृढ़ता से विरोध किया, लेकिन उसने लेमार्क के जीवाश्म संबंधी साक्ष्य और जैविक सम्बंधों से संबधित विचार का समर्थन किया। उनके अनुसार डायनासोर का विलुप्त होना, उनकी प्रजाति की 'जड़ता' के कारण हुआ। उन्होंने आगे 'विपदावाद' की वकालत की जो यह प्रस्तावित करता है कि पृथ्वी की परत में परिवर्तन आकस्मिक प्राकृतिक आपदाओं के कारण हुए हैं। हालांकि इस सिद्धांत को वैज्ञानिक आधार से पूर्ण समर्थन प्राप्त नहीं था।

चार्ल्स लायल (1797-1875), एक अंग्रेज वकील और महत्वपूर्ण भूवैज्ञानिक, ने क्यूवियर के विपदावादी सिद्धांत का खंडन किया। लायल ने अपनी तीन खंड में प्रकाशित पुस्तक (1830-1833) में प्रमाणों के साथ बाईबिल की विचारधारा के विपरीत सिद्ध किया कि पृथ्वी स्थापित धारणा से कुछ हज़ार वर्ष अधिक प्राचीन है; लम्बी समयावधि के साथ ही लम्बी भूगर्भीय समयावधि के लम्बे अंतराल में मन्द गति से प्राकृतिक प्रक्रियाओं द्वारा जैसे, भू-क्षरण, भूकंप, हिमनदीय गतिविधियाँ और ज्वालामुखियों के कारण पृथ्वी संरचनात्मक तथा जलवायु संबंधी अनेक परिवर्तनों से गुज़री। उन्होंने एकरूपतावाद के सिद्धांत के लिए निर्णायक साक्ष्य प्रस्तुत किया। जिसके अनुसार पृथ्वी में आए प्राकृतिक परिवर्तनों ने भूतकाल में भी उसी प्रकार प्रतिक्रिया की होगी और उसी तीव्रता के साथ की जैसा कि प्रतिक्रियाओं का रूप वर्तमान में दिखाई देता है।

2.3.2 डार्विन का सिद्धांत

डार्विन से पूर्व प्रचलित सिद्धांतों का अध्ययन, जिसने चार्ल्स डार्विन (1809-1882) को प्रकृति और जीवों के चयन के बारे में सोचने के लिए प्रेरित किया, और बाद में उन्होंने प्राकृतिक चयन और विकास के प्रसिद्ध सिद्धांत को अपनी प्रकाशित पुस्तक 'प्रजातियों की उत्पत्ति' (ओरीजिन

ऑफ स्पीशीज़) में प्रतिपादित किया। डार्विन के अनुसार, प्राकृतिक चयन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव स्वयं को अपने पर्यावरण के परिवर्तन के अनुकूल कर सकते हैं और इसीलिए वे जीवित रह पाते हैं और प्रजनन के योग्य होते हैं। डार्विन सर चार्ल्स लायल, टी. आर. माल्थस और अल्फ्रेड रसैल वॉलेस जैसे विद्वानों से प्रभावित थे।

डार्विन पर दो प्रमुख प्रभाव

माल्थस और उनका जनसंख्या का सिद्धांत	अल्फ्रेड रसैल वॉलेस और उनका प्राकृतिक चयन का सिद्धांत
• **थॉमस रॉबर्ट माल्थस** (1766-1834) 18वीं शताब्दी के एक अंग्रेज़ दार्शनिक और अर्थशास्त्री थे। • माल्थस द्वारा प्रस्तुत सिद्धांत जिसके अनुसार चिरघातांकी रूप से मानव जनसंख्या में वृद्धि (प्रत्येक चरण में दोगुनी), जबकि खाद्य उत्पादन में वृद्धि अंकगणितीय दर से होती है (उदाहरणार्थ, समय के प्रत्येक अंतराल पर एकसमान वृद्धि)। • सिद्धांत का उद्देश्य जनसंख्या की वृद्धि के परिणामस्वरूप खाद्य उत्पादन और खाद्य उपलब्धता में कमी को प्रकाश में लाना था। • यह सिद्धांत 1798 में 'एन एस्से ऑन द प्रिंसिपल ऑफ पापुलेशन' शीर्षक के अंतर्गत प्रकाशित हुआ था जो कि माल्थस द्वारा बदलाव के साथ दुबारा 1803 के आगामी संस्करण में प्रकाशित किया गया।	• **अल्फ्रेड रसैल वॉलेस** (1823-1913) एक ब्रिटिश प्रकृतिवादी, जीवभूगोलवेत्ता, लेखक और मानवतावादी थे। • वॉलेस क्रमिक विकास के सिद्धांत में डार्विन के एक सह-खोजकर्ता थे। • वॉलेस के सिद्धांत का कार्यकारी सिद्धांत, डार्विन की भांति प्राकृतिक चयन और प्रजातियों के उनके पर्यावरण के अनुकूलन पर आधारित था। • वॉलेस और डार्विन के शोध पत्र संयुक्त थे और 1859 में संयुक्त लेखन के अंतर्गत प्रकाशित हुए।

डार्विनवाद पाँच सिद्धांतों से युक्त है जो कि हैं:

i) **अधिक उत्पादन अर्थात अधिक उत्पादन का आधिक्य**: माल्थस का जनसंख्या सिद्धांत संकल्पना प्रजनन से सम्बंधित था और यह सिद्धांत इस पर ज़ोर देता है कि मानव की प्रत्येक पीढ़ी में जन्म लेने वाले व्यक्तियों की संख्या जीवित रहने योग्य लोगों से अधिक होगी।

ii) **विभिन्नता और अनुवांशिकता**: इसके अनुसार समान प्रजाति के प्रत्येक व्यक्ति एक समान नहीं होते बल्कि वे एक दूसरे से विभिन्न विशिष्टाओं के कारण भिन्न होते हैं। इनमें से कई अनुकूल रूपांतरण अनुवांशिक हैं और वे भावी पीढ़ी की संतान को हस्तांतरित हो जाते हैं।

iii) **अस्तित्व के लिए संघर्ष**: जैविक प्राणी ज्यामितीय अनुपात में वृद्धि करते हैं, जबकि खाद्य उत्पादन में वृद्धि केवल अंकगणितीय अनुपात में होती है। परिणामस्वरूप, यहाँ सीमित संसाधनों के लिए संघर्ष होता है। केवल चुनिंदा व्यक्ति ही इन सीमित संसाधनों को पा पाते हैं और बाकी इस जीवन संघर्ष में नष्ट हो जाते हैं।

iv) **योग्यतम की उत्तजीविता अर्थात प्राकृतिक चयनः** कुछ व्यक्ति विशेष में विशिष्ट विशेषताएं अथवा भिन्नताएं होने के कारण उनमें अन्य कम गुणों वाले व्यक्तियों की अपेक्षा जीवित रहने और प्रजनन करने के बेहतर अवसर होते हैं।

v) **प्रजातियों में परिवर्तनः** प्रजातियों में क्रमबद्ध परिवर्तन लम्बी भूगर्भीय समयावधियों में मंदगति से पर्यावरण में परिवर्तन के कारण प्रजातियों की चयन क्षमताओं में भी परिवर्तन आते हैं। जिसके परिणामस्वरूप इन प्रजातियों के योगात्मक परिवर्तनों में भी बदलाव आते हैं और वे अपने पैतृक जनसमुदाय से पूर्ण रूप से भिन्न हो जाते हैं।

डार्विनवाद जैविक विकास का सबसे अधिक प्रभावशाली सिद्धांत बना, परन्तु ये यह परिभाषित करने में अयोग्य साबित हुआ कि प्राकृतिक चयन वास्तव में किस प्रकार क्रमिक विकास में परिणित होता है। फिर भी, डार्विन के विचार को कुछ विद्वानों के समूह जैसे चार्ल्स, जार्ज लायल, थॉमस हक्सले, अर्नेस्ट हेकल, ऑगस्ट विसमेन, अल्फ्रेड रसैल, वॉलेस और सिम्पसन जैसे विद्वानों ने आगे बढ़ाया। डार्विन के प्राकृतिक चयन की अवधारणा का समर्थन करने की वजह से ये शोधार्थी नव-डार्विनवादियों के नाम से जाने जाते हैं। बाद में, इस विचारधारा के कुछ विद्वान जैसे सीवॉल राईट, रोनाल्ड फिशर और जे.बी.एस. हॉल्डेन ने प्राकृतिक चयन की व्याख्या आधुनिक संश्लेषण अर्थात नवीन-डार्विनवाद द्वारा की।

2.3.3 क्रमिक विकास का कृत्रिम सिद्धांत

विकास का यह सिद्धांत अनिवार्य रूप से प्राकृतिक चयन, अनुवांशिक उत्तराधिकार, उत्पत्ति संबंधी जनसांख्यिकी, वर्गीकरण विज्ञान और विशिष्टता का सिद्धांत और वृहत् विकास की अवधारणा का संयोजन है। इसके अतिरिक्त यह सिद्धांत विकास के अचयनित घटकों, विशिष्ट रूप से पृथक्करण, **उत्परिवर्तन** (mutation) और पुनःसंचयन पर भी जोर देती है (रीफ इत्यादि, 2000)।

जीवित प्राणियों का विभिन्न छोटे-छोटे समूहों अथवा आबादियों में भौगोलिक अथवा शारीरिक अवरोध विकास के लिए उत्तरदायी कारकों में प्रमुख है। इन बाधाओं में समुद्र, नदियां, पहाड़ आदि आते हैं जो समरूप व्यक्तियों में अन्तः प्रजनन प्रक्रिया में बाधक होते हैं। दूसरी ओर, उत्परिवर्तन जो व्यक्तियों में जीन की संरचना में परिवर्तन के लिए उत्तरदायी हैं, व्यक्तियों की विविधता का कारण हैं। अधिकतर अनुवांशिकविद् मानते हैं कि उत्परिवर्तन द्वारा जीन की परिवर्तन की आकृति प्राकृतिक चयन की तुलना में बहुत छोटी थी।

अनुवांशिकी रचनातंत्र की अपेक्षाकृत पूर्ण समझ के साथ, आज यह माना जाता है कि क्रमिक विकास वास्तव में व्यक्तियों में, जो जनसंख्या के एक समान-जीन-समुच्चय (gene pool) का अंश है, अनुवांशिक रूप से प्राप्त परिवर्तन का कुल योग है तथा एक व्यक्ति विशेष के बजाय समान जनसंख्या पर क्रमिक विकास के प्रकार्य का कारण है।

क्रमिक विकास के रचनातंत्र का आधुनिक सिद्धांत डार्विनवाद से निम्न तीन महत्वपूर्ण पहलुओं से भिन्न हैः

i) प्राकृतिक चयन के अतिरिक्त आधुनिक सिद्धांत क्रमिक विकास और अन्य महत्वपूर्ण बलों की पहचान करता है, जैसे उत्परिवर्तन (mutation), पृथक्करण (isloation) और जीन का प्रवाह (genetic drift)।

ii) क्रमिक विकास का आधुनिक सिद्धांत मानव की विशिष्ट अनुवांशिक तत्वों की पहचान करता है जिसे जीन के नाम से जाना जाता है। जनसंख्या में यह भिन्नता जीन के विविध युग्मों (alleles) की उपस्थिति के कारण है।

iii) यह सिद्धांत बतलाता है कि नई प्रजाति की रचना सामान्यतः छोटे अनुवांशिक परिवर्तनों के क्रमबद्ध संचयन से होती है।

आधुनिक कृत्रिम सिद्धांत मूलतः जीन, फेनोटाइप्स (phenotypes) और जनसंख्या के स्तर पर जैविक विकास की कार्यप्रणाली की व्याख्या करता है। हालांकि इस सिद्धांत को लेकर नव-उत्परिवर्तनवादियों (Neo-mutationists) ने अक्सर चुनौती दी है। आणविक जीवविज्ञानी मासातोशी नेई से प्रेरित अन्य कई नव-उत्परिवर्तनवादियों ने जैविक विकास के प्रमुख घटक के रूप में प्राकृतिक चयन की बजाय, उत्परिवर्तन (mutation) की प्रघटना (phenomenon) की वकालत की है।

क्रमिक विकास के ये सिद्धांत मानव के जैविक विकास के इतिहास को समझने योग्य बनाने में सहायता करते हैं। जीवाश्म के रूप में भूतकाल के साक्ष्य यह सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं कि मानव, वानर प्रजाति (apes) से कैसे विकसित हुआ। मानव विकास के सिद्धांत **जीवाश्मविज्ञानियों** और पुरातत्ववेत्ताओं द्वारा खुदाई में प्राप्त साक्ष्यों पर आज़माए गए। होमीनिड जीवाश्म के रूप में साक्ष्य, मानव के जैविक विकास को प्रक्षेप पथ (trajectory) प्रदान करने में सक्षम थे। इसने यह निर्धारित किया कि स्तनधारी वानर किस प्रकार आधुनिक मानव के रूप में विकसित हुए। वैज्ञानिकों का मानना है कि इस प्रक्रिया में लगभग 6 लाख वर्ष लगे।

बोध प्रश्न-1

1) जैविक विकास को 50 शब्दों में परिभाषित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) लेमार्क के क्रमिक विकास सिद्धांत की मुख्य विशेषताएं क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3) डार्विनवाद की मुख्य विशेषताओं की सूची बनाइये।

.....

.....

.....

.....

.....

4) रिक्त स्थान भरें:

क) माल्थस के जनसंख्या के सिद्धांत के अनुसार, मानव जनसंख्या ..... दर से बढ़ती है, जबकि खाद्य उत्पादन की वृद्धि ..... दर से बढ़ती है।

ख) 'अभिगृहीत गुणों' का सिद्धांत ..... के द्वारा प्रतिपादित किया गया।

ग) अल्फ्रेड रसैल वॉलेस ने ..... सिद्धांत प्रतिपादित किया।

5) डार्विनवाद क्रमिक विकास के कृत्रिम सिद्धांत से किस प्रकार भिन्न है?

.....

.....

.....

.....

.....

2.4 होमीनाईज़ेशन

होमीनाईज़ेशन वह प्रक्रिया है जो मानव के शारीरिक रूप से उनके वानर पूर्वजों से *होमो* प्रजाति में आविर्भाव को परिभाषित करती है। लेटिन शब्द 'होमो' जो एक जीव के रूप में मानव का प्रतिनिधित्व करता है, का सबसे पहले प्रयोग करने वाले स्वीडन के प्रकृतिवादी कार्ल लिनेयस थे। *होमो* वह प्रजाति है जो ***होमो सेपियंस*** के वंश को सम्मिलित करती है, जिसमें आधुनिक मानव के साथ-साथ अनेक विलुप्त प्रजातियां, जो आधुनिक मानव के बहुत नज़दीकी हैं, सबसे अधिक महत्वपूर्ण *होमो इरेक्टस* को भी सम्मिलित करती है।

मानव के जैविक विकास की कथा उसके वानर पूर्वजों के साथ 65 लाख वर्ष पहले आरंभ होती है। प्रोसिमिएंस (prosimians) से आरंभ होकर बंदर, वानर, विशालकाय वानर और अंत में मानव तक। वह डार्विन ही थे जिन्होंने वानर और मानव के मध्य की कड़ी को समझना संभव बनाया। अपनी कृति 'प्रजातियों की उत्पत्ति' (*Origins of Species*) में वे नई प्रजाति के अपने पूर्वजों से जैविक विकास के विचार पर तर्क देते हैं। मानव क्रमिक विकास का इतिहास *होमोनिड* और मानव के मध्य के महत्वपूर्ण चरण की खोज को भी शमिल करता है। यह चरण आधुनिक मानव के जन्म अर्थात आरंभ को उनके वानर पूर्वजों से अलग करके चिन्हित करता है।

चित्र 2.1: मानव के क्रमिक विकास के चरण
साभार: विकिमीडिया कॉमन्स
स्रोत: https://en.wikipedia.org/wiki/File:PrimateTree2.jpg

यह माना जाता है कि मानव के पूर्वजों की सबसे नज़दीकी कड़ी मायोसीन युग (23 लाख से 53 लाख वर्ष पहले) की है। सदाबहार पतझड़ वाले जंगलों के कारण उनका खुली

वनस्थली, झाड़ीदार मैदान, घास के मैदान में बदलना और मिश्रित (mosaic) वास, कभी-कभी झीलों, नदियों और जलधाराओं के किनारे घने छत्र वाले जंगलों में वानर स्वरूप पूर्वज इस युग में फले-फूले। पर्यावरण की विविधता ने नवीन परिवर्तन, जिसमें कई प्रकार के जानवरों सहित नर-वानर की गतिशीलता को उद्दीप्त किया। इसने इन्हें वृक्षवासी से भूमि पर जीवन की ओर स्थानान्तरित किया। द्विपादिता (bipedalism) का विकास अर्थात होमिनिन्स की सीधे चलने की योग्यता ने उन्हें खुली वनस्थली में बेहतर प्रयास करने के योग्य बनाया। नीचे हम वानर और मानव के बीच प्रमुख भेद वाले लक्षणों की चर्चा करेंगे, जिसमें द्विपादिता सबसे महत्वपूर्ण भेद है।

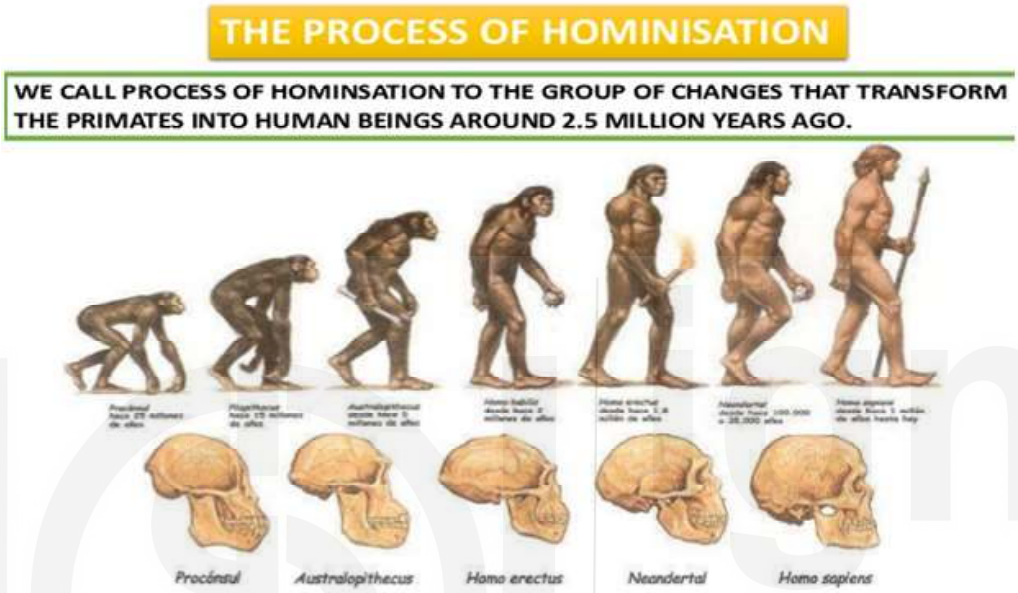

चित्र 2.2: होमोनाईज़ेशन

साभार: Prof. Pedro Flores, Professor de Geografía e Historia en IES Blas de Otero

स्त्रोत: https://www.slideshare.net/pflores88/the-prehistory-72472639

2.4.1 द्विपादिता (Bipadelism)

मानव ढांचे के कंकालीय परिवर्तनों के पीछे द्विपादिता एक मुख्य कारण था जो सभी द्विपादीय होमोनिडों में मौजूद है। *सहेलेंथ्रोपस* अर्थात *ओरोरिन* द्विपादिता के सर्वाधिक आदिम उदाहरण हैं। इन्हें अंतिम नर-वानर (primate) माना जाता है, जो वंश परंपरा में घुटनों से चलने वालों – गोरिल्ला और चिम्पांजी – की तरह था। द्विपादिता के अनेक लाभ हैं जैसे कि:

1) सीधा चलना हाथों को भोजन तक पहुँचने और उठाने के लिए स्वतंत्रता प्रदान करता है,

2) द्विपादिता गतिशीलता के दौरान ऊर्जा बचाता था,

3) इससे लम्बी दौड़ और शिकार में सहायता मिलती थी,

4) यह दृष्टि अवलोकन का एक विस्तृत क्षेत्र उपलब्ध कराता है,

5) यह सूर्य आदि के सीधे संपर्क में आने वाले भू-क्षेत्र को कम करके अतिताप (hyperthermia) से बचने में सहायता करता है,

6) यह एक साथ कई कार्य करने और उत्पादकता बढ़ाने में सहायता करता है, और

7) द्विपादिता, आगे अथवा पीछे के लंबे हाथ-पैर (hindlimbs and forelimbs) वाले वानर की तुलना में, आगे और पीछे के हाथ-पैरों द्वारा एक संतुलित अनुपात का निर्देशन करता है। आगे-पीछे घूमने योग्य अंगूठा औज़ार बनाने में सहायक सिद्ध हुआ।

द्विपादिता के साथ जुड़े हुए अन्य बदलाव हैं: लम्बे अंगूठे, कूल्हों और जन्म नलिका और कंकालीय ढ़ांचे में अन्य परिवर्तन।

2.4.2 एनसेफलाईज़ेशन (Encephalization)

होमोनाईज़ेशन की प्रक्रिया में अन्य महत्वपूर्ण परिवर्तन मानव के मस्तिष्क के आकार में वृद्धि था जो गोरिल्ला अर्थात चिम्पांजी की तुलना में, आकार में तीन गुना अधिक बढ़ा। मस्तिष्क के विस्तारण की यह प्रक्रिया एनसेफलाईज़ेशन कहलाती है और यह प्रक्रिया *होमो हेबीलिस* प्रजाति के साथ आरंभ हुई। परिणामस्वरूप, मस्तिष्क की कनपटी के पिण्डक में वृद्धि हुई, जिसका प्रयोग भाषा के प्रसंस्करण में किया जाता है और पूर्व-ललाट का बाहरी आवरण जटिल निर्णय लेने में सहायक होता है (मानव के जैविक विकास का वर्णन इस इकाई के **भाग 2.5** में किया गया है)।

2.4.3 लैंगिक द्विरूपता

एक अन्य घटक जो वानर से मानव पूर्वज में भेद करता है वह है लैंगिक द्विरूपता। जैसे वह स्थिति जिसमें एक ही प्रजाति के दो भिन्न लिंग अलग तरह के स्वभाव का प्रदर्शन करते हों। मानव की लैंगिक द्विरूपता में कमी आई जो कि अन्य वानर प्रजातियों (गिब्बन के अलावा, जो छोटे वानर भी कहे जाते हैं) की तुलना में नर के श्वदंत (canine) के घटाव, साथ ही भोंह कटक (brow ridges) और नरों का ज़्यादा शक्तिशाली होना, द्वारा विशेषित है। मानव में अन्य महत्वपूर्ण शारीरिक परिवर्तन कामुकता से सम्बंधित हैं जो गुप्त कामोत्तेजना (यौन ग्रहणशीलता की स्थिति) का क्रमिक विकास था।

2.4.4 अन्य कारक

अनेक दूसरे कारक जैसे कि उल्नर (ulnar) प्रतिकूलता (एक ही हाथ के अंगूठे और छोटी उंगली में सम्पर्क कर पाना), सूंघने की अपेक्षा दृष्टि में वृद्धि, आंत का छोटा होना, दंत पंक्ति में बदलाव, स्वेद (पसीना) ग्रंथियों में बदलाव आदि मानव और वानर में विभेदन निर्धारित करते हैं।

मानव और वानर के मध्य सम्बंध अनेक साक्ष्यों के आधार पर स्थापित किए गए हैं। आणविक जीवविज्ञान ने मानव और चिम्पांजी के मध्य डी.एन.ए. की 95-99 प्रतिशत समानता पाई है। चिम्पांजी और *होमोनिन* के मध्य अलगाव लगभग 40-80 लाख वर्ष पूर्व चिन्हित किया गया है।

मानव क्रमिक विकास का सबसे सुस्पष्ट साक्ष्य जीवाश्म की पहचान के साथ आया। जीवाश्मविज्ञानी वानर और मानव प्रजाति के जीवाश्म में समानताएं और असमानताएं ढूंढ कर वानर से मानव के क्रमिक विकास की जाँच कर पता लगाने में सक्षम थे। जीवाश्म अवशेष आधुनिक मानव प्रजाति के क्रमिक विकास के क्रमबद्ध चरणों को परिभाषित करने में सहायक हुए।

- जीवाश्म 1891 में ट्रिनिल, जावा द्वीप, इंडोनेशिया में खोजे गए।
- खोज के स्थान के आधार पर, जीवाश्म जनसाधारण द्वारा 'जावा मैन' के तौर पर पहचाने गए।
- प्रजाति की खोज यूजीन ड्यूबोइस के नेतृत्व में खुदाई करने वाले एक दल द्वारा की गई।
- नमूने को प्रारंभ में मानव और वानर के मध्य एक नई प्रजाति समझा गया और *पिथेकैन्थ्रोपस इरेक्टस* के तौर पर वर्गीकृत किया गया।

- अंततः 1940/50 के दशक में जर्मन जीवविज्ञानी अर्नस्ट मायर ने *सिनान्थ्रोपस पेकिनैन्सिस* (पीकिंग मैन) के जीवाश्म और जावा मैन के मध्य सम्बंध स्थापित किया, जिसके द्वारा दोनों एक ही प्रजाति *होमो इरेक्टस* (इसका इकाई में बाद में विस्तार से वर्णन किया गया है) के अंश के तौर पर वर्गीकृत किए गए।

1891 में जब सबसे पहले *होमिनिन* जीवाश्म खोजा गया, इसे भूलवश एक मानव प्रजाति का समझ लिया गया जो किसी प्रकार की बीमारी से पीड़ित था। 1920 के दौरान जब समान प्रकार के जीवाश्मों की खोज शुरू हुई तब ये अलग प्रजाति के तौर पर वर्गीकृत किए गए।

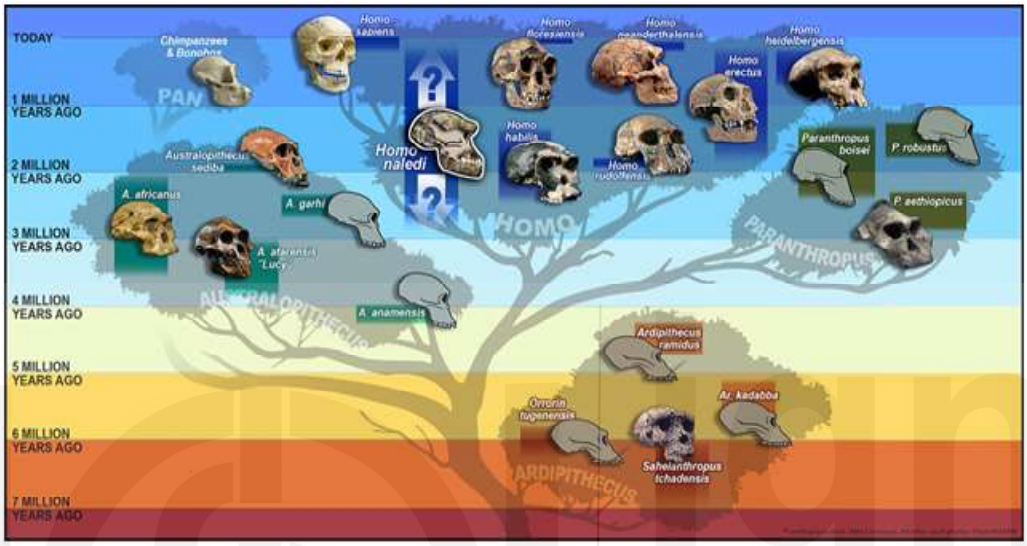

चित्र 2.3: होमो नलेडी: मानव वंश-वृक्ष की एक नवीन प्रजाति
साभार: चित्रणः एस.वी. मेदारिस, यू. डब्ल्यू-मैडिसन
स्त्रोत: यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कान्सिन (https://news.wisc.edu/naledi/)

2.5 मानव का क्रमिक विकास

मानव के सबसे नज़दीकी पूर्वजों के क्रमिक विकास को दो श्रेणी में विभाजित किया जा सकता है: होमो-पूर्व और होमो प्रजाति का क्रमिक विकास (चित्र के लिए देखें, https://www.britannica.com/science/human-evolution)।

2.5.1 होमो-पूर्व

यह वर्ग होमिनिड के जीवाश्म साक्ष्यों से वर्गीकृत किया गया है जो मानव के नज़दीकी सादृश्य तो हैं, लेकिन यह वानर से अधिक समीप्य हैं।

ड्रियोपिथिकस

ड्रियोपिथिकस, वानर सदृश्य विलुप्त जीव की एक प्रजाति है जो मानव के क्रमिक जैविक विकास के चरण का प्रतिनिधित्व करता है, जब मानव और वानर एक ही वंशावली का अंश थे। यह मिओसिन और प्लिओसिन भण्डार (23 से 2.6 लाख वर्ष पुराने) में जीवाश्म के रूप में प्राप्त हुए और शुरूआत में स्पष्ट रूप से अफ्रीका में उत्पन्न हुए थे। ड्रियोपिथिकस के अनेक रूप जाने जाते हैं, जिनमें छोटे, मध्यम और बड़े, गोरिल्ला के आकार के जीव सम्मिलित हैं। इसमें एक मानव और एक वानर में भेद करने वाली विशेषताओं का अभाव है। मानव की तुलना में श्वदंत (canine) बड़े हैं लेकिन अन्य वानर जीव जितने मजबूती से विकसित नहीं हैं। हाथ बहुत लम्बे नहीं थे। कपाल की ढाल में उचित विकास और आधुनिक वानर में मिलने वाली भारी भौंह कटक का अभाव था। इसलिए, ये गोरिल्ला और चिम्पैंजी का अग्रदूत था (चित्र के लिए देखें: https://www.thoughtco.com/dryopithecus-tree-ape-1093073)।

चित्र 2.4: ड्रियोपिथिकस के जीवाश्म
साभार: Ghedoghedo, 2013
स्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/0/02/Dryopithecus_fontani_mio_med_francia.JPG

रामापिथिकस

पहला रामापिथिकस जीवाश्म 1932 में उत्तर-पश्चिमी भारत की शिवालिक पहाड़ियों के जीवाश्म भण्डार में मिला। प्राइमेट्स (primates) जीवाश्म मध्य और उत्तर माइओसिन युग (लगभग 16.6 लाख से 5.3 लाख वर्ष पूर्व) से प्राप्त होते हैं। दो प्रजाति, *रामापिथिकस पंजाबीकस और रामापिथिकस विकेरी,* सबसे पहले खोजी गई थीं। जीवाश्म में प्राप्त जबड़े के टुकड़े *रामापिथिकस* का सम्बंध एक भिन्न प्रजाति के तौर पर देखा गया जो कि आधुनिक मानव (*होमो सेपियंस*) का प्रथम प्रत्यक्ष पूर्वज था। फिर भी, जब अमेरिकन मानवशास्त्री डेविड पिल्बीम ने *रामापिथिकस* के पूरे जबड़े की खोज की, जिसमें जबड़े की सुस्पष्ट रूप से आकृति थी और जो वी आकार के थे, मानव वंशावली के सदस्यों के अणुवृत आकृति के जबड़ों से भिन्न चिन्हित किए गए। इस साक्ष्य के आधार पर, पिल्बीम ने *रामापिथिकस* का वनमानुष के पूर्वज *सिवापिथेकस,* से सादृश्यता होने का निष्कर्ष निकाला (रिचर्ड लीके द्वारा खोजा गया रामापिथिकस मेंडीबल का चित्रण देखें: http://www.angelfire.com/mi/dinosaurs/zramapithecus.html)।

जिगांटोपिथिकस

एक बड़े कपि जीवाश्म की जाति, जिसमें दो प्रजातियां जानी जाती हैं: *जिगांटोपिथिकस बिलासपुरेंसिस,* जो कि 60 से 90 लाख वर्ष पूर्व भारत में निवास करती थीं, और *जिगांटोपिथिकस ब्लैकि,* जो चीन में कम से कम 10 लाख वर्ष पूर्व तक जीवित था। ये वानर उनके दांतो, निचले जबड़े की हड्डियों और संभवत बाहरी प्रांगडिका (हाथ के ऊपरी भाग की हड्डी) के टुकड़े से पहचाने जाते हैं। ये आकार में विशाल थे, शायद गोरिल्ले से भी बड़े। ये खुले मैदान में रहते थे और इनके पीसने और चबाने वाले मजबूत दांत थे (चित्र के लिए देखें: https://prehistoric-fauna.com/Gigantopithecus-blacki)।

सबसे पहले नमूने जर्मन-डच जीवाश्म विज्ञानी जी.एच.आर. वॉन कोएनिग्सवाल्ड द्वारा खोजे गए, जो चीन की एक दवा की दुकान में मिलें, वहां ये 'ड्रेगन के दांत' के नाम से जाने जाते थे। यद्यपि, दांत बड़े थे, लेकिन उसमें मानव के दांत से कुछ समानताएं भी थीं, जिसने कुछ

जीवाश्म विज्ञानियों को यह सोचने के लिए प्रेरित किया कि अवश्य ही मानव के पूर्वज 'विशाल' रहे होंगे। बाद में पूरे जबड़े की हड्डियों की खोज ने यह प्रमाणित किया कि वे विलुप्त वानर प्रजाति से सम्बंधित थे (रैफरटी, 2018)।

ऑस्ट्रैलोपिथिकस

चित्र 2.5: ऑस्ट्रैलोपिथिकस जीवाश्म
सभार: दुरोवा, 2007
स्त्रोत:https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/7/7d/Australopithecusafarensis_reconstruction.jpg

ऑस्ट्रैलोपिथिकस का पहला जीवाश्म 1924 में रेमंड डार्ट द्वारा खोजा गया, वे दक्षिणी अफ्रीका, के टॉंग शहर के जोहान्निसबर्ग में शरीर रचना विज्ञान के प्रोफेसर थे। यह पाँच वर्ष के बच्चे का दूध के दांतों सहित कपाल था। कपाल (skull) की संरचना में वानर सदृश्य कई विशेषताएं थीं जैसे कि उठा हुआ (projecting) चेहरा और छोटा मस्तिष्क। इसकी स्पष्टतः मानव सहश्य विशेषताएं भी थीं। उदाहरण के तौर पर, वानरों की तरह नुकीले के बजाय गोलाई जबड़ा। **फोरामेन मेग्नम** (foramen magnum; कपाल के आधार पर छिद्र जो मेरुदण्ड रज्जू में मिलता है) के वेन्ट्रल (ventral) की स्थिति दर्शाती है कि जीव सीधा चला करता था। कपाल 28 लाख वर्ष पुराना है और इसे *ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफ्रीकानस* का नाम दिया गया। जनसाधारण में कपाल को उसकी खोज के स्थान के नाम पर टॉंग बालक के तौर पर भी जाना गया।

सबसे सुस्पष्ट और अच्छी तरह से संरक्षित किया गया ऑस्ट्रैलोपिथिकस का नमूना, एक मादा कंकाल का है जो कि 1974 में जीवाश्म विज्ञानी डोनाल्ड जॉनसन के नेतृत्व में वैज्ञानिकों के एक दल ने इथियोपिया के हदर क्षेत्र में खोजा था। मानवशास्त्री उस कंकाल का लगभग 40% एकत्रित कर सके और उसे 'लूसी' उपनाम दिया गया[1]।

1938 में, ऑस्ट्रैलोपिथिकस जाति के अन्य दूसरे जीवाश्म की खोज हुई, जिसे ऑस्ट्रैलोपिथिकस रोबस्टस का नाम दिया गया।

ऑस्ट्रैलोपिथिकस

ऑस्ट्रैलोपिथिकस की विभिन्न प्रजातियां प्लिओसीन (53 लाख से 26 लाख वर्ष पूर्व) और प्लिस्टोसीन (26 लाख से 11,700 लाख वर्ष पूर्व) युग के दौरान जीवित थीं। वहाँ लगभग 40 लाख से 18 लाख वर्ष पूर्व ऑस्ट्रैलोपिथिकस (Au) की प्रजातियां जैसे ऑस्ट्रैलोपिथिकस ऐनामेंसिस, ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफारेंसिस, ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफ्रीकानस, ऑस्ट्रैलोपिथिकस बाहरेलघज़ाली, ऑस्ट्रैलोपिथिकस गर्ही और आस्ट्रैलोपिथिकस सेडिबा थीं। वहाँ लगभग 30 लाख से 27 लाख वर्ष पूर्व केन्यान्थ्रोपस के साथ प्रजाति के. प्लेट्योपस था। इसकी अंतिम उप-पीढ़ी लगभग 30 लाख से 12 लाख वर्ष पूर्व, पेरांथ्रोपस थे, जिसकी प्रजातियां पी. ऐथिओपिकस, पी. बोईसेई और पी. रोबस्टस थीं।

प्रजाति होमो से *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* का विभेद मुख्यतः सबसे छोटे आकार के शरीर, अपेक्षाकृत सबसे छोटे आकार के मस्तिष्क, अपेक्षाकृत सबसे छोटे दांत और बड़े चेहरे, इसके अतिरिक्त अन्य शरीरिक अंतर की वजह से है।

[1] इसका नामकरण रॉक बैंड बीटल्स के प्रसिद्ध गीत 'लूसी इन द स्काय विद डायमंड्स' से प्रेरित होकर किया गया।

नवीनतम खोजें

जीवाश्म विज्ञानी लगातार जीवाश्मों की खोज में शामिल रहे। कुछ वर्ष पहले ही, मानव जीव की उत्पत्ति से सम्बंधित अनेक नए साक्ष्य प्राप्त हुए। उदाहरण के तौर पर, अक्टूबर 2009 में, मध्य इथियोपिया में एवॉश के एक दल द्वारा मानव जीवाश्म का सबसे बड़ा भण्डार खोजा गया जिसमें *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* और *आरडीपिथिकस* की अलग प्रजातियां थीं।

8 अप्रैल 2010 को, कुछ वैज्ञानिकों ने दक्षिणी अफ्रीका में *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* की नई प्रजाति के जीवाश्म की खोज की। नई प्रजाति को *ऑस्ट्रैलोपिथिकस सेडिबा* नाम दिया गया, जो मालापा नाम की गुफा से प्राप्त हुआ। जीवाश्म 19.5 और 17.8 लाख वर्ष के लगभग पुराना है। जीवाश्म में एक युवा नर, जिसकी आयु मृत्यु के समय लगभग 12-13 वर्ष होगी, जिसकी एक खोपड़ी और आंशिक कंकाल और एक वयस्क मादा का जबड़ा और आंशिक कंकाल सम्मिलित हैं। पहले, विस्तारित मस्तिष्क और शिशुओं का बड़े मस्तिष्क के साथ जन्म लेना मानव की उत्पत्ति के लिए एक विशिष्ट कारक माना गया था लेकिन *ऑस्ट्रैलोपिथिकस सेडिबा* के कंकालों के जीवाश्म पर नई खोज दर्शाती है कि कूल्हे और मस्तिष्क की बाहरी सतह में महत्वपूर्ण परिवर्तन मस्तिष्क के विस्तार से पूर्व घटित हुआ।

दिसम्बर 2003 में, वैज्ञानिकों ने निएन्डरथल के जीन्स का खाका तीन अलग निएन्डरथल मानव जीवाश्मों की हड्डी से लिए गए डी.एन.ए. अंशों से बनाया, प्रत्येक एक-दूसरे से भिन्न हैं, यह इसे वह सबसे पहली विलुप्त प्रजाति बनाता है जिसका डी.एन.ए. खोजा गया है। यह जीवाश्म विन्दिजा गुफा, क्रोएशिआ से प्राप्त किए गए थे जो लगभग 44,000 वर्ष पुराने हैं।

मार्च 2015 में वैज्ञानिकों को इथियोपिया में एक नया जीवाश्म मिला, जिसे 'लेडी जॉ' का नाम दिया गया और जिसका तिथि निर्धारण 27.5 लाख से 28.0 लाख वर्ष पूर्व किया गया है। इसके निचले जबड़े, सिर्फ बाईं ओर के आधे जबड़े, जिसके *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* के पूर्वज से छोटे दांत हैं, जबकि इसके अन्य गुण बाद की *होमो* प्रजाति से समानताएं रखते हैं जैसे कि *होमो हैबिलिस*।

सितम्बर 10, 2015 को अन्य असाधारण खोज हुई जब दक्षिणी अफ्रीका की राइजिंग स्टार गुफा से पंद्रह कंकाल मिले। इन कंकालों के आधुनिक मानव के समान पैर और हाथ, साथ ही ऊंचे कंधे, चौड़े कूल्हे और *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* के प्ररूपी फैली हुई पसलियाँ इसे *होमो* पूर्वज के सदृश्य बनाते हैं। अभी तक प्राप्त जीवाश्म भण्डारों में लक्षणों का यह संयोजन अब तक कहीं और नहीं मिलता, अतः शोध दल ने इस जीवाश्म को एक नई प्रजाति *होमो नलेडी* का नाम दिया (**स्रोत:** https://www.si.edu/; *होमो नलेडी* पर ज्यादा जानकारी के लिए देखें: https://www.youtube.com/watch?v=oxgnlSbYLSc)।

अब हम प्रजाति होमो की तरफ बढ़ते हैं और पूरी दुनिया में पाई गई होमो की विभिन्न प्रजातियों के बारे में चर्चा करते हैं।

2.5.2 मानव (होमो) प्रजाति का क्रमिक विकास

ऐसा विश्वास किया जाता है कि प्रथम मानव ऑस्ट्रौलोपिथेसिन के पूर्वज से लगभग 2 लाख वर्ष पूर्व विकसित हुए। *ऑस्ट्रैलोपिथिकस अफ्रेंसिस* को आमतौर पर *होमो* जाति के पूर्वज के सबसे नज़दीकी समझा जाता है। होमो जाति को पत्थर के औज़ार के प्रयोग और कूल्हों के विकास के द्वारा वर्गीकृत किया गया था।

होमो हैबिलिस

होमो हैबिलिस 28 लाख से 14 लाख वर्ष पूर्व जीवित थे। यह दक्षिणी और पूर्वी अफ्रीका में होलोसीन युग के अंत और प्रारंभिक प्लीस्टोसीन युग में विकसित हुए। पहला जीवाश्म 1960 में मैरी लीके और लुई के नेतृत्व में एक दल द्वारा तंज़ानिया के ओल्डुवई गॉर्ज, पूर्वी अफ्रीका में खोजा गया। इस स्थान पर हड्डियों के साथ पत्थर के औज़ार मिले। इसका औज़ारों के

साथ सम्बंध होने के कारण, यह आरंभिक मानव *होमो हैबिलिस* कहलाया, मतलब 'हैंडी मैन'। *होमो हैबिलिस* का कद छोटा था, जिसके हाथ, पैरों से लम्बे थे और कंकाल काफी हद तक ऑस्ट्रैलोपिथिकस जैसा था। इनका मस्तिष्क बड़ा था और दाढ़ें ऑस्ट्रैलोपिथिकस की अपेक्षा छोटी थीं।

चित्र 2.6: होमो हैबिलिस की फोरेन्सिक पुनर्रचना

साभार: W. Schnaubelt & N. Kieser, 2006/7

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/48/Homo_habilis.JPG

चित्र 2.7: कूबी फोरा, उत्तरी केन्या से प्राप्त होमो हैबिलिस के कपाल की प्रतिकृति

साभार: Locutus Borg, 2007

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/4/45/Homo_habilis-KNM_ER_1813.jpg

मई 2010 में दक्षिणी अफ्रीका के गॉन्टेन में जोहानसबर्ग के समीप स्टर्कफॉंटेन गुफा में एक नई प्रजाति *होमो गॉटेनजेनसिस* प्राप्त हुई। दो प्रकार के नमूने, *होमो रुडोल्फेनसिस* और *होमो इर्गास्टर, होमो हैबिलिस* और *होमो इरेक्टस* के मध्य के काल के माने जाते हैं।

होमो इरेक्टस

होमो इरेक्टस का अर्थ है 'सीधा मानव' जो *होमो* जाति की एक विलुप्त प्रजाति है। यह लगभग 19 लाख वर्ष पूर्व प्लीस्टोसीन युग में रहता था। *होमो इरेक्टस* एक मध्यम कद का मानव था जो सीधा चलता था। इसका मस्तिष्क कोटर (braincase) नीचे था, माथा पीछे की ओर था और नाक, जबड़े, तालू चौड़े थे। मस्तिष्क छोटा था और दांत आधुनिक मानव की तुलना में बड़े थे। ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ 1,000,000 वर्ष पूर्व *होमो इरेक्टस* आग को काबू करने वाली प्रथम मानव प्रजाति थी।

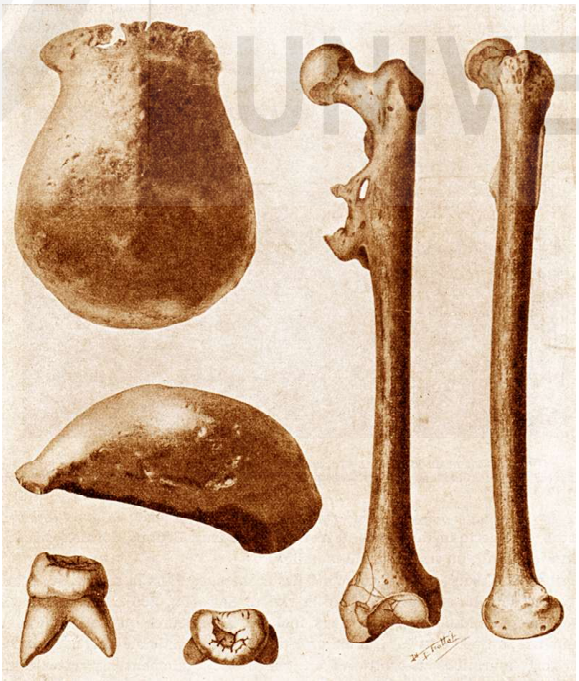

चित्र 2.8: होमो इरेक्टस के जावा से प्राप्त जीवाश्म, 1891

साभार: पर्सनल स्कैन 120

स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Pithecanthropus-erectus.jpg

अब तक इसकी तीन उपप्रजातियाँः *होमो इरेक्टस जावानेनसिस* (जावा), *होमो इरेक्टस पीकिन्सिस* (चीन) और *होमो इरेक्टस नरमादेन्सिस* (भारत) प्राप्त हुई हैं।

होमो सोलोएन्सिस

होमो सोलोएन्सिस की खोज 1931-1933 के बीच गुस्ताव हेनरिक रॉल्फ वॉन कोएंग्सवाल्ड के द्वारा की गई, यह *होमो इरेक्टस* की एक उपप्रजाति है। इंडोनेशिया के जावा द्वीप की सोलो नदी के किनारे इसे खोजा गया। यह प्रजाति बाद के *होमो इरेक्टस* का एक रूपांतर है और *होमो हाइडेलबर्जेन्सिस* के समय की है। यह भी संभव है कि ये आदिम *होमो सेपियंस* के समय की हो। आकृति के अनुसार इसकी नेत्र क्षमता 1,013-1,252 क्यूबिक सें.मी. (ब्राउन, 1992) है जो कि *होमो इरेक्टस* के समरूप है।

डेनिसोवा होमिनिन्स

डेनिसोवा होमिनिन्स अथवा *डेनिसोवांस,* होमो जाति के आद्य मानव की विलुप्त या उपप्रजाति है। मार्च 2010 में वैज्ञानिकों ने अल्ताई पर्वतों में स्थित साईबेरिया की डेनिसोवा गुफा से एक किशोर मादा, जो लगभग 41,000 वर्ष पूर्व अस्तित्व में थी, की उंगली की हड्डी के टुकड़े की खोज की घोषणा की। यह गुफा निएंन्डरथलों और आधुनिक मानव का भी आवास रही। इस प्रजाति के शारीरिक अवशेषों में सिर्फ उंगली की हड्डी, दो दांत और एक पैर के पंजे की हड्डी मिली है। ये साक्ष्य संकेत देते हैं कि *डेनिसोवा* बहुत शक्तिशाली थे, संभवतः *निएंडरथल* के समान आकार में बड़े थे।

होमो निएंडरथलेन्सिस

निएंडरथल को अक्सर *होमो सेपियंस निएंडरथलेन्सिस* भी कहा जाता है। इनका नाम जर्मनी की एक घाटी निएंडर वैली के नाम पर रख गया है, जहां 1856 में सबसे पहले इनके जीवाश्म प्राप्त हुए। ये यूरोप और एशिया में लगभग 400,000 से 28,000 वर्ष पूर्व जीवित थे। *निएंडरथल* मानव ने विविध प्रकार के औज़ार बनाए जिनमें खुरचनी, भाले की नोक और हाथ की कुल्हाड़ी सम्मिलित हैं। ये झोपड़ियों और गुफाओं में रहते थे, अपने घायलों और बीमारों की देखभाल करते थे और आमतौर पर अपने मृतकों को वस्तुओं के साथ दफनाते थे। इस तरह दफनाना संकेत देता है कि मृत्यु के बाद भी जीवन होता है, इस अवधारणा में उनका विश्वास था। यह आधुनिक मानव की सांकेतिक सोच के लक्षण का पहला साक्ष्य है (रावेन इत्यादि, 2005)।

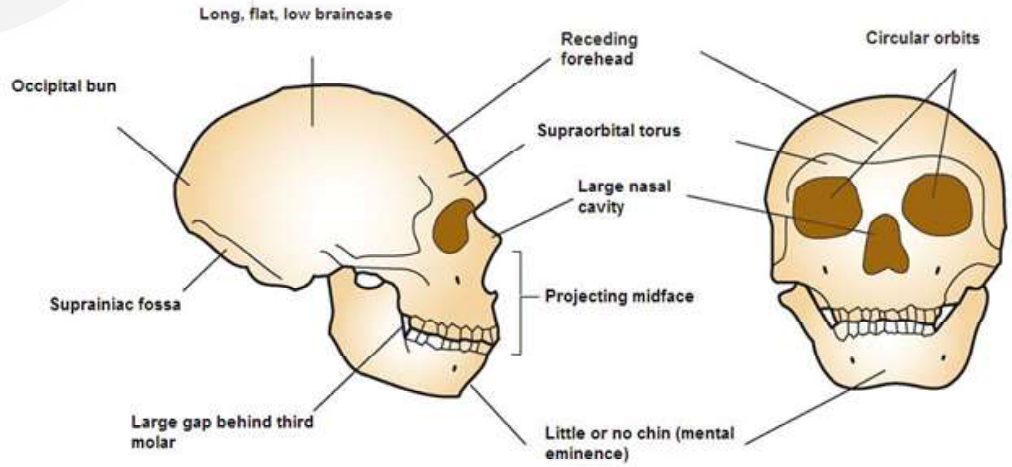

चित्र 2.9: निएंडरथलों की कपालीय शारीरिक रचना
साभारः जेसन पॉटर
स्रोतः https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Neanderthal_cranial_anatomy.jpg

हालांकि, आधुनिक मानव और निएंन्डरथलों की जनसंख्या के बीच कई शारीरिक भिन्नताएं हैं। निएंडरथलों की ठंड को सहन करने की क्षमता श्रेष्ठतर थी, उनके मस्तिष्क उल्लेखनीय रूप से बड़े, तथा उनकी दृष्टि बेहतर और वे शारीरिक रूप से श्रेष्ठतर थे।

निएंडरथल लगभग 38,000 वर्ष पूर्व विलुप्त हो गए थे। हाल ही के दशकों में दो मुख्य सिद्धांत उभरे हैं जिनका फोकस उनके विलोपन पर केंद्रित है। प्रथम सिद्धांत के अनुसार, पश्चिमी यूरोप में भीषण ठंड की वजह से प्रजाति पर अत्यधिक तनाव पड़ा। दूसरे सिद्धांत के अनुसार, आधुनिक मानव जिनके मस्तिष्क बड़े, और जिनका पर्यावरण के प्रति बेहतर अनुकूलन था, से मुकाबले के कारण निएंडरथल जीवित न रह सके और विलुप्त हो गए।

क्रमिक विकास के दौरान मानव बुद्धि के कई लक्षण विकसित हुए जैसे कि सहानुभूति, विलाप, अनुष्ठान तथा प्रतीकों और औज़ारों का प्रयोग। ये लक्षण महान् वानरों (apes) में भी पाए जाते थे लेकिन आधुनिक मानव से कम जटित रूप में, जैसे कि महान् वानरों की भाषा। *होमो सेपियंस* में पूर्ण रूप से समझने और एक दूसरे से संवाद करने की क्षमता विकसित थी। मानव बोध का क्रमिक विकास मानव मस्तिष्क, बातचीत और भाषा की उत्पत्ति के क्रमिक विकास से करीब से सम्बंधित है। आधुनिक मानव और निएंडरथलों की कंठिका की हड्डियों में लगातार गिरावट आई जिसके कारण भिन्न प्रकार की ध्वनियों का निर्माण हुआ। बुद्धिमत्ता और बोलने की क्षमता साथ-साथ विकसित होती हैं। ज्ञान के लिहाज से बुद्धिमत्ता सबसे उन्नत रचना है जो हमारी बुद्धि में यंत्रस्थ है। वास्तव में अधिकतर मानवशास्त्री इस बात से सहमति रखते हैं कि 'ग्रेट लीप फॉरवर्ड', जिसका आरंभ मानव अस्तित्व के आधुनिक युग में हुआ, होने का कारण पूर्ण संज्ञानात्मक विकास था जिसने जटिल भाषा को संभव बनाया।

होमो सेपियन्स

होमो सेपियन्स यानी 'बुद्धिमान मानव' वह प्रजाति है जिससे आधुनिक मानव संबधित है। *होमो सेपियन्स* 40,000 वर्षों पूर्व से अस्तित्व में हैं। इन्हें क्रो-मैग्नॉन मानव भी कहते हैं, जिसका नाम फ्रांस की एक घाटी के नाम पर रखा गया है जहां पर उनके जीवाश्म सर्वप्रथम 1868 में खोजे गए। क्रो-मैग्नॉन मानव का सामाजिक संगठन जटिल था और धारणा है कि उनकी भाषा क्षमता परिपूर्ण थी। वह शिकार करके जीवन बिताते थे। इसके साथ ही वे विस्तारित मस्तिष्क (***इंट्राक्रेनियल***) की बढ़ी हुई क्षमता और पत्थर के औज़ारों की तकनीकी का ज्ञान और प्रयोग द्वारा चिह्नित किए जाते हैं और यही सबूत हैं *होमो इरेक्टस* से *होमो सेपियन्स* में संक्रमण का।

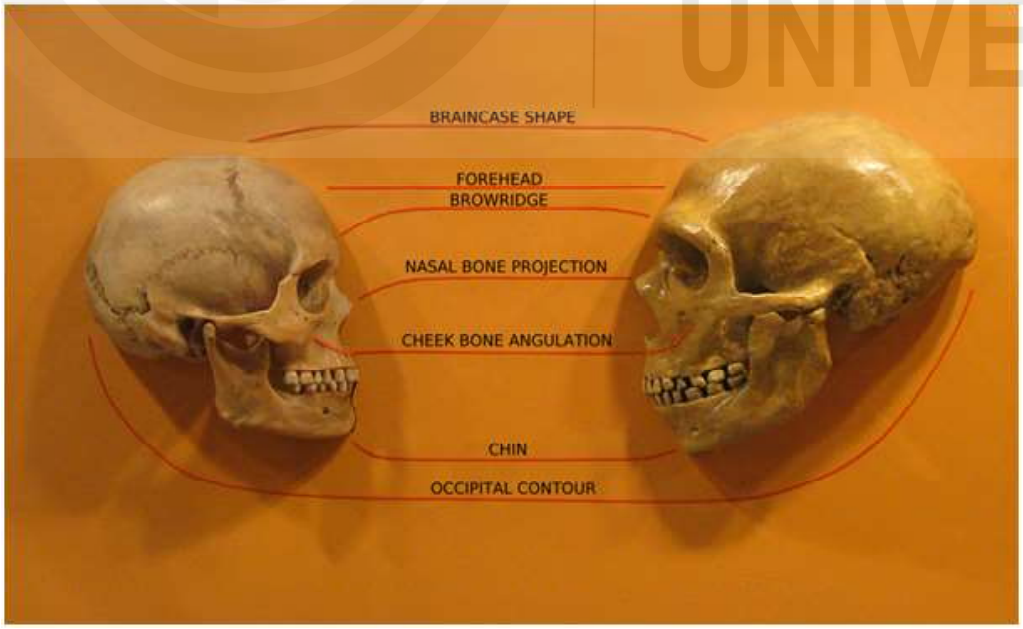

चित्र 2.10: होमो सेपियन्स (बांए) और होमो निएंडरथल (दांए) के मध्य कपाल की शारीरिक रचना की तुलना (क्लीवलेंड म्यूज़ियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री)

साभार: hairymuseummatt, KaterBegemot (https://www.flickr.com/photos/hmnh/3033749380/)

स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Sapiens_neanderthal_comparison_en.png

प्रारंभिक *होमो सेपियन्स* स्थायी जीवनशैली के अतिरिक्त शिकार और भोजन एकत्रीकरण पर जीवन निर्वाह के लिए निर्भर थे। वे बड़ी गुफाओं या तम्बुओं में रहते थे और गुफाओं में नक्काशी, चित्रकारी और अन्य प्रकार के कलात्मक क्रियाकलापों में भी संलग्न रहते थे। उनके पास बड़ी संख्या में औज़ार और शिकार करने के विविध हथियार मौजूद थे।

बोध प्रश्न-2

1) कौन-कौन सी विशेषताएं मानव को वानर से भिन्न करती हैं ?

.....

.....

.....

.....

.....

2) द्वपादिता से आप क्या समझते हैं ?

.....

.....

.....

.....

.....

3) होमो प्रजाति को अन्य होमिनिड जीवाश्म से क्या भिन्न करता है?

.....

.....

.....

.....

.....

4) खाली स्थान भरें:

क) सबसे अच्छी तरह से संरक्षित *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* प्रतिरूप का उपनाम ..... है। इस जीवाश्म की खोज ..... में पुरामानव वैज्ञानिक (Paleoanthropologist) ..... ने की।

ख) शब्द '*होमो सेपियन्स*' का अर्थ है .....।

ग) ..... शब्द का मतलब है 'सीधी आकृति वाला मानव'।

घ) प्रथम *होमो हेबिलिस* जीवाश्म की खोज मैरी लीके और लुई के नेतृत्व में एक दल ने 1960 के दशक में ..... नामक स्थान पर की गई।

2.6 सारांश

जैविक क्रमिक विकास एक बहुत जटिल घटना है जिसका अध्ययन अनेक विद्वान यूनानी काल से करते आए हैं। लैमार्क, लायल, मैंडल और माल्थस के अनेक महत्वपूर्ण सैद्धांतिक योगदानों ने व्यापक रूप से स्वीकृत डार्विन के सिद्धांत के विकास में योगदान दिया। फिशर, राइट और हाल्डेन ने अपनी 'सिंथेटिक थ्योरी ऑफ इवोल्युशन' में इसे पुनः परिष्कृत किया। प्राकृतिक चयन और जीन की विरासत का सम्मिश्रण क्रमिक विकास के कारकों के तौर पर इन सिद्धान्तों को चिह्नित करता है। मानव की उत्पत्ति को स्थापित करने के लिए इन घटनाओं का अन्य शारीरिक मानव विज्ञान के सबूतों के साथ उपयोग किया गया। जीवाश्म की प्राप्ति एक ऐसा सबूत था जो अब तक मानव विकास के क्रमिक चरणों का पता लगाने में सबसे कारगर साबित हुआ है। पुरामानव वैज्ञानिकों ने जीवाश्म की खोज की और उन्हें तुलनात्मक शारीरिक रचना द्वारा वर्गीकृत किया। वानर और मानव को जीवाश्म की मदद से पूर्वज के रूप में स्थापित किया गया है। मानव विकास की यात्रा प्राइमेटस से शुरू हुई और वानर में विकसित हुई। जलवायु परिस्थितियों में परिवर्तन की वजह से खुली भूमि की तरफ बेहतर अनुकूलन क्षमता का विकास हुआ और इसी वजह से मानव का सीधे खड़े होकर दो पैरों पर चलना संभव हो पाया। आगे चलकर मानव के सबसे निकटतम पूर्वज का जन्म हुआ जो दो पैरों पर चलते थे। ड्रायोपिथिकस से *ऑस्ट्रैलोपिथिकस* तथा उससे *होमो सेपियन्स* तक आधुनिक मानव कुछ 40,000 वर्ष पहले क्रमिक विकास की प्रकिया द्वारा विकसित हुए। यह प्रकिया अब से 60 लाख वर्षों से 40,000 वर्ष पहले घटित हुई।

2.7 शब्दावली

द्विपादिता : सीधे दो पैरौं पर चलने की प्रक्रिया

जीवाश्म : पृथ्वी पर जीवित रहने वाले अति प्राचीन जीवों के परिरक्षित अवशेष या उनके द्वारा चट्टानों में छोड़ी गई छापें जो पृथ्वी की सतहों या चट्टानों की परतों में सुरक्षित पाई जाती हैं। मानव जीवाश्म मुख्य रूप से कंकाल और दांत के रूप में पाये जाते हैं।

उत्परिवर्तन (mutation) : किसी जीन के डी. एन. ए. में कोई स्थायी परिवर्तन होना।

पुरामानव वैज्ञानिक : वह विशेषज्ञ जो पुरातत्व की शाखा के माध्यम से वर्तमान मानव प्रजातियों के मूल और पूर्ववर्ती मानव का अध्ययन करते हैं। जीवाश्म और अन्य अवशेशों के उपयोग से यह अध्ययन किया जाता है।

2.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) भाग 2.2 देखें

2) उप-भाग 2.3.1 देखें

3) उप-भाग 2.3.2 देखें

4) क) चिरघातांकी, अंकगणितीय दर

ख) लैमार्क

ग) प्राकृतिक चयन

5) उप-भाग 2.3.2 और उप-भाग 2.3.3 की तुलना करें (उपभाग 2.3.3 ध्यान से देखें)

बोध प्रश्न-2

1) भाग 2.4 और उप-भाग 2.4.1 से 2.4.4 देखें

2) उप-भाग 2.4.1 देखें

3) उप-भाग 2.5.2 देखें

4) क) लूसी, डोनाल्ड जोहानसन, इथियोपिया में हदर

ख) बुद्धिमान मानव

ग) *होमो इरेक्टस*

घ) तंजानिया, पूर्व अफ्रीका में ओल्डुवाई गॉर्ज

2.9 संदर्भ ग्रंथ

ब्राउन, पी. (1992). 'रीसन्ट ह्यूमन इवोल्युशन इन ईस्ट एशिया एंड ऑस्ट्रेलिया'. *फ़िलॉसॉफ़िकल ट्रान्ज़ेक्शन्स ऑफ द रॉयल सोसायटी ऑफ लंदन. बी, 337* (1280): 235-242.

हॉल, बी. एवं *एम. डब्ल्यू. बरजर.* (2008). *बरजर्स इवोलुशन.* (जोन्ज़ एवं बार्टलेट लर्निंग).

क्रॉजे, जे., फू, क्यू, गुड, जे. एम., वीओला, बी., शुनकोव, *एम. वी., डेरेवीआनको, पी.,* एवं पाबौ, एस. (2010). 'द कम्प्लीट माइटोकॉन्ड्रियल डी एन ए जीनोम ऑफ एन अन्नोन होमिनिन, फ्रांम सदर्न साइबेरिया'. *नेचर. 464* (7290), 894.

रेफर्टी, जे. *पी. 2008. 'गिगन्टोपिथेकस'. एन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका.*

रेवन, *पी. एच., जॉनसन, जी.* बी., लॉसोस, जे. बी. एवं सिंगर, एस. आर. (2005). *बायोलॉजी.* सातवाँ संस्करण. नई दिल्ली: टाटा मेक्ग्रॉ हिल पब्लिशिंग कंपनी लिमिटिड.

रीफ, डब्ल्यू. ई., जन्कर, टी., एवं हाब्फेल्ड, यू. (2000). 'द सिन्थेटिक थ्योरी ऑफ इवोल्यूशन: जनरल प्रॉब्लम्स एंड द जर्मन कान्ट्रीब्यूशन टू द सिन्थेसिस'. *थ्योरी इन बाओसाइन्सेज़.* 119 (1), 41-91.

स्पेन्सर, *एच.* (1862). *फ़र्स्ट प्रिन्सपल्स.*, मेक्मास्टर यूनिवर्सिटी ऑर्काइव फॉर द हिस्ट्री ऑफ इकोनोमिक थॉट्.

स्मिथसोनियन नेशनल म्यूज़ियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री. 28 अगस्त 2017 को एक्सेस किया. https://www.si.edu/

स्टोन, लिंडा, लरक्विन, पॉल एफ. एवं कावाली-एसफोरज़ा., एल. लूका. (2006). *जीन्ज़, कॅल्चर एंड ह्यूमन इवोल्युशन: ए सिन्थेसिस.* न्यूयॉर्क: विली ब्लैकवेल.

पी डी एफ:

हाउ ह्यूमन्स इवॉल्वड

www.mhhe.com/biosci/genbio/raven6b/graphics/raven06b/other/raven06b_23.pdf

https://www.britannica.com/animal/Gigantopithecus

https://www.jstor.org/stable/pdf/4330635.pdf?refreqid=search%3A57645ec65070a67f12177cb266930cc7

https://www.jstor.org/stable/pdf/192425.pdf?refreqid=search%3A1c2eb48887010d229bb6ab4511e283e5

https://www.jstor.org/stable/pdf/24931324.pdf?refreqid=search%3Aec37a33d68c0038dbf95a1537f171fc0

https://www.jstor.org/stable/pdf/2742808.pdf?refreqid=search%3Ad44a9ef7270a9ad75f42b6c72cd2472a

https://en.wikipedia.org/wiki/Human_evolution

2.10 शैक्षणिक वीडियो

ऑरिजिन्स ऑफ ह्यूमन्स
https://www.youtube.com/watch?v=SUfujVWcj5I

द निएंडरथल्स: फर्स्ट पीपल्स ऑफ यूरोप
https://www.youtube.com/watch?v=FbAptAnrwN8

न्यू ह्यूमन एन्सेस्टर डिस्कवर्ड: होमो नलेडी
https://www.youtube.com/watch?v=oxgnlSbYLSc

ऐप टू मैन: एवोल्यूषन डॉक्यूमेन्ट्री
https://www.youtube.com/watch?v=5sMqFivWTmk

इकाई 3 पुरापाषाण और मध्यपाषाण संस्कृतियाँ*

इकाई की रूपरेखा

3.1 उद्देश्य

3.2 प्रस्तावना

3.3 पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.1 पुरापाषाण समाज में लिंग आधारित श्रम विभाजन पर दृष्टिपात

3.3.2 निम्न पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.3 मध्य पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.4 उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियाँ

3.3.5 कलात्मक अभिव्यक्तियाँ

3.4 मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.4.1 पर्यावरण संबंधी बदलाव

3.4.2 सूक्ष्मपाषाण औज़ार

3.4.3 जीवन निर्वाह का तरीका और सामाजिक जटिलता

3.4.4 यूरोप में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.4.5 स्कैंडिनेविया और ब्रिटेन में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.4.6 दक्षिण पश्चिम एशिया में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

3.5 सारांश

3.6 शब्दावली

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

3.8 संदर्भ ग्रंथ

3.9 शैक्षणिक वीडियो

3.1 उद्देश्य

इस इकाई में **पुरापाषाण** और **मध्यपाषाण** संस्कृतियों को विश्व परिप्रेक्ष में देखा गया है। इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः

- पुरापाषाण और मध्यपाषाण का अर्थ समझ सकेंगे,
- इस काल की औज़ार तकनीकी को पहचान पाएँगे,
- इस काल से जुड़े स्थानों से संबधित उपयुक्त उदाहरण देने में सक्षम होंगे,
- इस काल के सांस्कृतिक स्वरूपों की विशेषताएँ बता सकेंगे, और
- विकास की प्रक्रिया के रूप में पुरापाषाण और मध्यपाषाण काल की संस्कृतियों का विवरण दे सकेंगे।

3.2 प्रस्तावना

मनुष्यों के क्रमिक विकास की गाथा उनके सांस्कृतिक विकास से जुड़ी है। ब्रिटिश

* डॉ. शतरूपा भट्टाचार्य, लेडी श्रीराम कालेज फॉर वुमन, दिल्ली विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

पुरातत्वशास्त्री इयान होडर (2016) के अनुसार, औज़ार निर्माण और अन्य भौतिक संस्कृतियों के साथ मानव संबंध उनके जैविक और संज्ञानात्मक विकासमूलक परिवर्तनों में योगदान देते हैं। इसी प्रकार, विलियम आंद्रेफस्की जूनियर (2009) कहते हैं कि पाषाण तकनीकियों और उनके बनाने के तरीके, उत्पादन, पुनः प्रयोग और त्याग देने की प्रक्रिया, हमें घुमंतु समाजों की ग्राह्य रणनीतियों के बारे में बताते हैं। अक्सर, पत्थर के औज़ार प्रागैतिहासिक मानव के जीवन पर प्रकाश डालने वाले एकमात्र पुरावशेष हैं जो समय की अनिश्चिताओं के सामने टिक पाये। प्रारंभिक पुरावशेषों के महत्व को समझने के लिए, दुनिया भर में अस्तित्व में आई सभ्यताओं के विभिन्न प्रकार के सांस्कृतिक स्वरूपों, औज़ार संस्कृति से लेकर कला रूपों की चर्चा इस इकाई में की गयी है, हालांकि यहाँ चर्चा का केन्द्र यूरोप और पश्चिम एशिया है।

प्रारंभिक मानव की कहानी उनके उन कार्यकलापों से जुड़ी है जिसके सहारे उन्होंने अपने परिवेश को बदलना और पर्यावरण के साथ संपर्क बनाना शुरू किया। जिन्दा रहने और औज़ार निर्माण की योग्यता ने प्रारंभिक सांस्कृतिक परिवर्तनों को दिशा दी। जैसा कि इस पाठ्यक्रम की **इकाई 2** (मानव का जैविक विकास) में आपने देखा कि *होमो* प्रजाति 25 लाख साल पहले प्रकट हुई और इसके साथ ही पत्थर के औज़ार भी प्रारंभ हुए। औज़ारों को मानव-निर्मित वस्तुओं के रूप में पहचाना गया है जिनका इस्तेमाल शारीरिक श्रम करने में होता था। औज़ार सांस्कृतिक परिवर्तनों के सबसे महत्वपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करते हैं। **फलक** तकनीक (flaking: एक बड़े पत्थर को छील कर छोटे टुकड़ों में बदलना) के सहारे औज़ारों को एक विशेष आकार दिया जाता था ताकि विभिन्न कार्यों में इसका इस्तेमाल किया जा सके। औज़ारों के आकार और इस्तेमाल की विशिष्टताओं ने विभिन्न संस्कृतियों के महत्वपूर्ण आपसी अंतरों को जन्म दिया। इसके अतिरिक्त, ग्राह्य क्षमता उत्तरजीविता का एक महत्वपूर्ण तरीका था। जिसने प्रारंभिक मानव के प्रसार और विकास को सुनिश्चित किया। मानव की कहानी शिकार और भोजन संग्रहण के लिए सरल औज़ार बनाने और इसके साथ होने वाले उन असंख्य परिवर्तनों से शुरू होती है, जिन्होंने मानवता के इतिहास को बदलकर रख दिया।

इतिहासकार, मानवविज्ञानी, पुरातत्त्वविदों और भौतिकविदों ने मानव के सांस्कृतिक विकास को समझने और समझाने के लिए कई सिद्धांत प्रस्तावित किये हैं (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटीज़,* भाग 1, 1996)। उदाहारण के लिए, सी.जे. थॉम्सन ने, प्रागैतिहासिक संस्कृतियों के तीन-स्तरीय वर्गीकरण का सुझाव दिया, जो निम्नलिखित हैं:

क) प्रारंभिक पुरापाषाण काल खाद्य-संग्रहण के चरण का प्रतिनिधित्व करता है,

ख) उत्तर पुरापाषाण काल संगठित शिकार और चुनिन्दा संग्रहण के चरण के रूप में सामने आता है, और

ग) नवपाषाण काल खाद्य उत्पादन का चरण है।

दूसरी तरफ, एस. नीलसन ने जंगली, शिकारी या ख़ानाबदोश, कृषक और सभ्यता के चरणों के आधार पर विकास के चार चरणों को प्रतिपादित किया है। एडवर्ड टेलर के अनुसार, मनुष्यों में सामान्य बुद्धि और तर्कसंगत व्यवहार था जिसने उनके सांस्कृतिक विकास को दिशा दी। उन्होंने मनुष्यों के सांस्कृतिक विकास के तीन चरणों का उल्लेख किया है: क्रूरता, बर्बरता, और सभ्यता। अमेरिकी मानवशास्त्री, लुईस एच. मॉर्गन (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी,* भाग 1, 1996) का मानना है कि मानव का सामाजिक विकास पर्यावरण संबंधी तनावों के अनुसार खुद को ढालने की उनकी क्षमता में निहित है। इस आधार पर उन्होंने विकास को सात चरणों में वर्गीकृत किया है, जो बर्बरता के निम्नतम चरण से शुरू होकर सामान्य खाद्य-संग्रहाक चरण से होते हुए सभ्यता के चरण को उस समय प्राप्त करता है जब समाज में लेखन कला का विकास होता है।

3.3 पुरापाषाण संस्कृतियाँ

'Palaeolithic' शब्द दो यूनानी शब्दों से बना है: *palaios* का अर्थ 'पुराना' और *lithos* का अर्थ 'पत्थर' है और इसका उपयोग '**पुरापाषाण काल**' को इंगित करने के लिए किया जाता है। यह शब्द 1865 में पुरातत्त्ववेत्ता जॉन लब्बॉक द्वारा चलन में लाया गया और इसका प्रयोग लगभग 25 लाख वर्ष पहले प्रागैतिहासिक काल के लिए किया जाता था जब मनुष्यों ने पत्थर के औज़ार बनाने शुरू किए।

होमो हैबिलिस से *होमो सेपियन्स* तक मानव के विकास की एक लंबी प्रक्रिया है, जिसे आपने जैविक परिवर्तनों से सम्बंधित **इकाई 2** में सीखा। विकास को प्रभावित करने वाले परिवर्तन सिर्फ जैविक नहीं वरन् सांस्कृतिक भी थे। प्रारंभिक मनुष्यों के विकास में सांस्कृतिक परिवर्तनों की भी एक प्रमुख भूमिका थी। इस संदर्भ में जब हम सांस्कृतिक परिवर्तनों का जिक्र करते हैं, तो हम न केवल पत्थर के औज़ारों का निर्माण और उनके सामयिक विकास का, बल्कि पर्यावरण के बदलाव और संसाधनों की उपलब्धता का जिक्र भी करते हैं जिसमें शिकार की रणनीतियाँ, संचार के तरीके, आग को नियंत्रित करने, औज़ार बनाने और संशोधित करने की क्षमता, निर्वाह के स्वरूप, शवाधान के तरीके, चित्रकला आदि शामिल हैं।

औज़ारों के उत्पादन का उनकी उपयोगिता से निकट का रिश्ता है। यह अधिकतर उस काल की निर्वाह रणनीति से जुड़ा होता है। शोधार्थियों के लिए यह बहस का मुद्दा रहा है कि किस हद तक शिकार अर्थव्यवस्था का आधार था। क्या हम शुरुआती मानव को शिकारी या शिकारी-संग्रहकर्ता के रूप में या संग्रहकर्ता के रूप में पहचान सकते हैं? और क्या हम औज़ारों के साथ-साथ जीवाश्म रिकॉर्ड के मामले में पाए गए सबूतों के आधार पर इन संस्कृतियों में श्रम के लिंग आधारित विभाजन के बारे में बात कर सकते हैं?

3.3.1 पुरापाषाण समाज में लिंग आधारित श्रम विभाजन पर दृष्टिपात

बहुत लंबे समय तक 'शिकार की परिकल्पना' सबसे स्वीकार्य सिद्धांत था जिसके अनुसार शिकार जीवन जीने का एक तरीका था और इसे पुरुष प्रधान गतिविधि के रूप में समझा जाता था। शिकार को सर्वप्रमुख आर्थिक प्रयास के रूप में चित्रित किया गया था और यह माना जाता था कि भोजन की व्यवस्था करना और उसे आपस में बांटने पर पुरुषों का नियंत्रण था। ऐसा माना जाता था कि पुरुष नेता और 'प्रभारी' होते थे और महिलाओं और बच्चों पर नियंत्रण रखते थे। यह माना जाता था कि महिलाओं का उत्तरदायित्व, उनकी प्रजनन क्षमताओं के कारण, मातृत्व कार्यों और देखभाल करने तक सीमित था और जिनकी गतिविधियां आधार क्षेत्र के अन्दर ही सीमित थीं।

दूसरी तरफ, पुरुषों पर शिकार करने और भोजन उपलब्ध कराने की जिम्मेदारी थी – एक संगोष्ठी में रिचर्ड बी. ली और आई. देवोर (1968) ने 'मैन द हंटर' की अवधारणा के साथ शुरुआत की और बाद में यही उनकी पुस्तक का शीर्षक बना। नैन्सी टैनर, ए. जिह्लमैन (1978) और अन्य विद्वानों ने लैंगिक ध्रुवीकरण पर आधारित इन सिद्धांतों की कड़ी आलोचना की और प्रागैतिहासिक समाजों में लिंग आधारित श्रम विभाजन की धारणा का खंडन किया। उनका मानना था कि शिकार केवल अवसरवादी जरुरत था। उनके अनुसार, अजीर्ण औज़ारों और उनके कार्यों से पता चलता है कि शिकार शुरुआती मानव की मुख्य आर्थिक गतिविधि नहीं थी, बल्कि वे संग्रहकर्ता थे। ये विद्वान इस धारणा पर सवाल करते हैं कि क्या सभी महिलायें माँ थीं? और तर्क देते हैं कि प्रसव आधारित श्रम विभाजन की धारणा भ्रामक है। कई मानववैज्ञानिक अध्ययनों से पता चलता है कि महिलाओं ने शुरुआती समय में औज़ार निर्माताओं के रूप में काम किया था। उदाहरण के लिए, नारीवादी पुरातत्वविदों में अग्रणी जोआन गेरो (कैथ्रीन डब्ल्यू आर्थर, 2010 में उद्धृत) का तर्क है कि प्रागैतिहासिक महिलायें

अवश्य ही औज़ार-निर्माता रही होंगी क्योंकि उन्हें कई तरह के कार्यों को करने के लिए फलक औज़ारों की आवश्यकता होती थी। मानवविज्ञान के अध्ययनों से पता चलता है कि अधिकतर संग्राहक समाजों में महिलायें खाद्य उत्पादन प्रक्रियाओं के एक बड़े हिस्से में अपना योगदान देती थीं। इसके अलावा, कई समाजों में महिलायें, अकेले अथवा पुरुषों के साथ, शिकार पर निकल जाती थीं। एक प्रकार से प्रागैतिहासिक समाजों में संग्रहण लिंग आधारित श्रम विभाजन को चुनौती देता है।

इन विद्वानों के तर्कों को आगे बढ़ाने के लिए संग्रहण परिकल्पना दी गई जिसके अनुसार प्रागैतिहासिक काल में पुरुषों की अपेक्षा महिलाओं ने एक केन्द्रीय भूमिका निभाई थी। यह सिद्धांत बताता है कि महिलाओं ने पेड़-पौधों से प्राप्त भोजन के संग्रहण और प्रक्रमण के लिए औज़ारों का उपयोग किया। वे तर्क देते हैं कि संग्रहण भी एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी और इसे कम उत्पादक 'महिलाओं के काम' या कम उत्पादक काम के रूप में पेश नहीं किया जा सकता। हालांकि, यह परिकल्पना शुरुआती समाजों में लिंग आधारित श्रम विभाजन की उपस्थिति को स्वीकार करती है। ए. जिह्लमैन (1978) जैसे विद्वानों का मानना है कि मानव जीवन का तरीका श्रम के लिंग विभाजन पर आधारित नहीं था, बल्कि एक ऐसी प्रणाली पर आधारित था जहां पुरुष और महिलाएं एक शिकारकर्ता के रूप में व्यवहारिक लोचकता के साथ एकत्रण और शिकार कार्य में संलग्न होते थे जो प्रारंभिक मानव (होमिनिडों) के अस्तित्व का प्रमुख कारक था। एक तरह से प्रारंभिक समाज के अस्तित्व के लिए दोनों का योगदान समान रूप से जरुरी था।

3.3.2 निम्न पुरापाषाण संस्कृतियाँ

पुरापाषाण संस्कृति को औज़ारों की प्रगति, सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों, बसावट के पटैर्न तथा अन्य मानदंडों के आधार पर तीन कालों में बांटा गया है। यह निम्न पाषाण संस्कृति से शुरू होती है जिसके बारे में हम इस उप-भाग में चर्चा करेंगे।

ब्रायन फेगन (2014) चार मानदंडों की चर्चा करते हैं जिसके आधार पर 'मानव' को परिभाषित किया जाता है। पहला, मस्तिष्क का आकार जो 600 घन सेंटीमीटर से अधिक होना चाहिए। दूसरा, भाषा की समझ, जिसे मस्तिष्क के अन्दर पाये गए पैटर्न्स के आधार पर पहचाना जा सकता है। तीसरा, एक मानव की तरह सटीक पकड़ और मुड़ सकने वाला अंगूठा। और चौथा, औज़ार निर्माण की क्षमता।

प्रागैतिहासिक काल के वो पहले 'मानव' कौन थे जिन्होंने औज़ार निर्माण सीखा यह अब तक एक पहेली है। इस मामले में 25 लाख साल पहले मनुष्यों की एक प्रजाति जिन्हें *ऑस्ट्रैलोपिथिकस गर्ही* कहा जाता है, एक दिलचस्प खोज है। इस प्रजाति के मस्तिष्क का आकार प्रारंभिक मनुष्यों का एक तिहाई था और वो वानर की तरह दिखते थे। लेकिन *आस्ट्रैलोपिथिकस गर्ही* के जीवाश्मों के पास पाए गए हिरण और चिकारा की हड्डियों पर पत्थर के औज़ारों के प्रहार के निशान पाए गए। लेकिन ऐसा कोई औज़ार अभी तक नहीं मिला है जिसे प्राथमिक औज़ार निर्माता की पहचान के पुख्ता सबूत की तरह इस्तेमाल किया जा सके। हालांकि, इस बात के कुछ सबूत मिले हैं जो इस बात की ओर इशारा करते हैं कि प्रारंभिक मनुष्य प्रजातियाँ मांसाहारी थीं और उन्होंने पत्थर के कुछ औज़ारों का उपयोग सीख लिया था जिसने मानव विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

25 लाख साल पुराने *होमो हैबिलिस* द्वारा निर्मित औज़ार पाए गए हैं जो साधारण और अपरिष्कृत थे। उनके साथ जुड़ी तकनीक को ओल्डोवान टूल तकनीकी कहा जाता है, जिसका नाम तंजानिया में ओल्डुवाई गॉर्ज के नाम पर रखा गया है, जहां यह औज़ार पहली बार खोजे गए थे। काटने वाला गंडासा सबसे शुरुआती औज़ार माना जाता है। ये आमतौर

पर प्रहार विधि (यानी एक वस्तु का दूसरे पर प्रहार) द्वारा बनाए जाते थे, आमतौर पर लावा के छोटे पत्थरों को आपस में टकराया जाता था। इस प्रकार उत्पादित फलक (खंडित पत्थर के छोटे, पतले टुकड़े) लंबे और तेज होते थे जिनका इस्तेमाल खुरचने और काटने वाले औज़ार बनाने के लिए किया जाता था जिनसे लकड़ी, पौधों, त्वचा और मांस को काटा या खुरचा जाता था।

निकोलस टोथ (*हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी*, 1996) ने तर्क दिया है कि प्रथम औज़ार निर्माताओं को औज़ार की क्षमता, साथ ही औज़ार तकनीकी की यांत्रिकी की स्पष्ट समझ थी। औज़ार बनाने के लिए हाथों और आँखों में एक अच्छे समन्वय की आवश्यकता तथा एक औज़ार को आकार देने के लिए पत्थरों में तीव्र कोणों को पहचानने और मानसिक प्रसंस्करण की क्षमता होनी चाहिए। इस प्रकार पत्थर में आकार और किनारों से यह पहचानना संभव हो जाता है कि इसे प्रारंभिक मानव द्वारा एक औज़ार के रूप में तैयार किया गया था। डी. स्ट्रॉउट (2011) ने दर्शाया है कि ओल्डोवान औज़ार जैसी सरल शिल्पकृति में भी एक जटिल विधि शामिल थी जिसमें कच्चे माल का सावधानीपूर्वक चयन किया जाता था, इसके बाद फलक उत्पादन और फिर फलक का पृथक्करण किया जाता था। इसके बाद, प्रहार विधि के इस्तेमाल से औज़ारों का उत्पादन किया जाता था।

चित्र 3.1: पत्थर का गंडासा ओल्डोवान
साभार: जोसे-मैनुअल बेनिटो अलवारेज, 2007

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/a/a7/Oldowan_tradition_ chopper.jpg

ओल्डोवान तकनीक ही औज़ार बनाने की एकमात्र ऐसी तकनीक थी जो 10 लाख साल से ज्यादा चलन में रही। 'नैपिंग' शब्द फलकों को कोर से हटाने और 'डेबिटेज' शब्द अपशिष्ट पदार्थों के लिए इस्तेमाल किया गया है। सबसे पुराना कोर सरल एकध्रुवीय (एकल) कोर था जिसमें से एक या दो फ्लेक्स हटा दिए गए थे। बाद के प्रारंभिक मानव अधिक जटिल लेवलोइस तकनीक का इस्तेमाल करने लगे जिसमें पूर्वनिर्धारित आकार और माप के फलक को हटाया जा सकता था। सबसे शुरुआती कोर को आमतौर पर गुटिका-औज़ार (pebble-tool) कहा जाता था।

औज़ार उपयोग पर हाल के शोध से पता चलता है कि ओल्डोवान औज़ार शिकार के लिए नहीं थे और पौधों और जानवरों को काटने या छीलने में उपयोगी थे। वे ज्यादातर शवों के

प्रक्रमण, खाल उतारने, जोड़ों और मांस खोलने, और हड्डियों को खोलने के लिए तोड़ने के लिए इस्तेमाल किए जाते थे। ओल्डोवाई जॉर्ज और कूबी फोरा (उत्तरी केन्या में झील तुर्काना के नजदीक) दोनों स्थानों पर बड़ी संख्या में जानवरों की हड्डियों और औज़ारों को एक साथ एक छोटे से क्षेत्र में केंद्रित पाया गया है। अन्य परभक्षियों की उपस्थिति के साथ, इस चरण में आग या पालतू जानवरों की खोज की अनुपस्थिति और उन स्थानों पर औज़ारों के साथ-साथ जानवरों की हड्डियों का पाया जाना इस बात की ओर इशारा करता है कि प्रारंभिक होमिनिड्स अक्सर मांस के लिए अवसरवादी संग्रहण पर निर्भर करते थे और यदा-कदा मांस की खोज में घूमते थे।

स्टीवन मिथेन (1995) का मानना है कि प्रारंभिक मनुष्यों की संज्ञानात्मक या सीखने और समझने की क्षमता महत्वपूर्ण थी। यह उनके आसपास के वातावरण को समझने में मदद करती थी। इन परिवर्तनों के साथ सामाजिक बुद्धि भी विकसित हुई होगी, जिसे निर्वाह पैटर्न, औज़ार बनाने आदि के संदर्भ में देखा जा सकता है। मानवविज्ञानी रॉबिन डनबर (फेगन, 2014 में उद्धृत) ने तर्क दिया है कि *होमो हैबिलिस* अवश्य ही समूहों में रहते होंगे, क्योंकि यह उत्तरजीवी रहने की एक आवश्यक रणनीति थी। जी. क्लार्क (फेगन, 2014 में उद्धृत) सुझाव देते हैं कि उन्होंने शायद समर्थित शाखाओं के साथ पत्थर की संरचना द्वारा किसी प्रकार का आश्रय बनाया होगा। संचार कौशल इस अवधि से जुड़ा एक और विकास है। वे संवाद करने के लिए अवश्य ही गुर्राहट और इशारों का उपयोग करते होंगे। दूसरों के साथ बातचीत करने की क्षमता ने अन्य जटिल सामाजिक बातचीत के लिए मार्ग प्रशस्त किया होगा, जिसने उनकी संज्ञानात्मक क्षमताओं की वृद्धि में योगदान दिया होगा।

होमो इरेक्टस का आना सिर्फ जैविक परिवर्तनों से नहीं बल्कि औज़ार तकनीक में हुए महत्वपूर्ण परिवर्तनों से भी जुड़ा है। ये शुरुआती मनुष्य एश्युलियन औज़ार प्रौद्योगिकी से जुड़े थे, जिसका नाम फ्रांस के सेंट एश्युल स्थान के नाम पर रखा गया है। इस तकनीक में दोधारी औज़ार शामिल थे जिसमें दोनों पक्षों पर फ्लेकिंग (flaking) की गई थी और ये औज़ार अधिक नुकीले और बेहतर थे। वे बहुउद्देश्यीय औज़ार थे, जिनका उपयोग लकड़ी के काम करने, खाल निकालने के साथ-साथ जानवरों को काटने के लिए भी किया जाता था। इसके साथ ही हस्त-कुल्हाड़ी और क्लीवर या मांस काटने वाले बड़े चाकू जैसे औज़ार पहली बार सामने आते हैं और बहुत उपयोगी साबित होते होंगे क्योंकि उन्हें कई बार तेज किया जा सकता था। पशुओं की चीरफाड़ करने और बड़े पशुओं के शिकार के साक्ष्य बॉक्सग्रोव (वेस्ट ससेक्स, इंग्लैंड), और एम्ब्रोना और टोर्रल्बा (मध्य स्पेन) जैसी जगहों पर पाए गए हैं। एम्ब्रोना और टोर्रल्बा में, अपरिष्कृत हस्त-कुल्हाड़ी, बड़े चाकू, खुरचनी और काटने के औज़ार भी पाए गए हैं। साक्ष्य इंगित करते हैं कि हाथी, गैंडा, जंगली भैंसा, हिरण आदि जैसे बड़े जानवरों को इन जगहों में काटा गया था। कई विद्वानों का मानना है कि ये स्थान सूझबूझ के साथ योजनाबद्ध परिष्कृत शिकार का प्रतिनिधित्व करते हैं।

फलक (Flakes)

- फलकों को दो समूहों में वर्गीकृत किया जाता हैः उप-उत्पाद और साभिप्राय फ्लेकिंग।
- फ्लेक्स का उत्पादन औज़ारों से काम करने के परिणामस्वरूप हो सकता है और ये फलक मलबे का हिस्सा होते हैं।
- क्लेक्टोनियन, लेवालोइस और मोस्तारियन जैसे तरीकों से साभिप्राय फलकों का उत्पादन किया जा सकता है, जिसका विवरण इस भाग में आगे किया गया है।

चित्र 3.2: एक एश्युलियन हस्त-कुल्हाड़ी के विभिन्न पक्ष. फ्रांस के हॉट-गारोन से प्राप्त, 500,000 और 300,000 बी पी

साभार: डिडिएर देस्कौएन्स, 2010

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/87/Biface_Cintegabelle_MHNT_PRE_2009.0.201.1_V2.jpg

एश्युलियन तकनीक का सबसे विशिष्ट औज़ार हस्त-कुल्हाड़ी, एक आँसू की बूंद के आकार का औज़ार था। औज़ार प्रौद्योगिकी में नवोंमेषों के आधार पर, एश्युलियन तकनीक को प्रारंभिक और बाद के चरण में विभाजित किया जा सकता है। ब्लैंक (blank) नामक बड़े फलकों का उत्पादन, जो हस्त-कुल्हाड़ी को आकार देने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त था, इस चरण में प्रारंभिक एश्युलियन तकनीक का एक महत्वपूर्ण नया प्रयोग था, हालांकि हस्त-कुल्हाड़ी इस चरण का एक छोटा और सुडौल औज़ार था। *होमो इरेक्टस* बेहतर शिकारी थे और हस्त-कुल्हाड़ी का उपयोग प्रक्षेप्य (projectile) के रूप में कर सकते थे। इस प्रकार, हस्त-कुल्हाड़ी को एक औज़ार के साथ-साथ एक हथियार के रूप में भी इस्तेमाल किया जा सकता था। दूसरा महत्वपूर्ण औज़ार क्लीवर (cleaver; मांस काटने वाला बड़ा चाकू) था, जो एक छोर पर सीधे कटे किनारों वाला एक बड़ा फलक था। इन औज़ारों का पुनः उपयोग किया जा सकता था, इन्हें पुनः तेज किया जा सकता था और एक फलक औज़ार के रूप में इनका पुनर्नवीनीकरण किया जा सकता था। इन औज़ारों के उत्पादन के लिए पत्थरों के अलावा लकड़ी, बारहसिंगे के सींग और हड्डियों का इस्तेमाल भी किया जाता था। आहार में मांस के शामिल होने से अन्य सामाजिक परिवर्तन भी हुए जैसे समूह का गठन और पृथक औज़ार किट का निर्माण। खुरचनी, क्लीवर, सतह-खुरचनी, बोला (bola) पत्थर और अन्य सरल लेकिन कुशल औज़ार उत्पादित किए गए।

चित्र 3.3: क्लैक्टोनियन हस्त-कुल्हाड़ी, लगभग 350,000 बी सी ई तथा रिकसन फार्म के गड्ढ़ों से उत्खनित, यूनाइटेड किंगडम

साभार: बेल्लरोथ, 2010

स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/6/6e/Hand-axe-Clactonian.JPG

एश्युलियन प्रौद्योगिकी के बाद के चरण में, उद्यत कोर (core) तकनीक का उपयोग करके औज़ारों का उत्पादन किया जाने लगा, यानी, पहले कोर को तराशा जाता था और उसके बाद वांछित औज़ार का उत्पादन करने के लिए फलक का उत्पादन किया जाता था। क्लैक्टोनियन (clectonian) तकनीक निम्न पुरापाषाण तकनीक से जुड़ा एक विशिष्ट पाषाण संयोजन है जिसका नामकरण क्लेक्टन-ऑन-सी (एसेक्स, इंग्लैंड) नामक स्थान के आधार पर किया गया है। हेनरी ब्रुइल के वर्गीकरण के अनुसार (ओहेल, 1978 में उद्धृत) ये औज़ार बड़े, चौड़े और मोटे फलकों से ब्लाक-ऑन-ब्लाक (खंड-दर-खंड) पद्धति द्वारा निर्मित थे। इन्हें एश्युलियन औज़ारों से अलग माना जाता था। हालांकि, आजकल कई विद्वान जैसे ओहेल और अन्य विद्वान क्लैक्टोनियन तकनीक को एक अलग औज़ार प्रौद्योगिकी के रूप में नहीं बल्कि फ्लेकिंग प्रक्रिया के ही एक हिस्से के रूप में देखते हैं। इस विधि को कभी-कभी हस्त-कुल्हाड़ी रहित निम्न पुरापाषाणिक औज़ार संस्कृति के रूप में भी समझा जाता है। कई विद्वान इस विधि को लेवालोईस (Levallois) तकनीक के अग्रदूत के रूप में भी मानते हैं।

होमो इरेक्टस अफ्रीका से बाहर निकलने वाला पहला समूह था जिससे उनकी अपने को परिस्थितियों के अनुकूल ढाल लेने की क्षमता फिर से प्रतिबिंबित होती है। वे पूर्वी अफ्रीका में सवाना से जावा, उत्तरी अफ्रीका, यूरोप, एशिया इत्यादि की दुर्गम जलवायु के अनुसार खुद को ढाल सकते थे। वे आग को नियंत्रित करने की क्षमता से भी वाकिफ़ थे। दक्षिण अफ्रीका की वंडरवर्क गुफा से 18 लाख वर्ष पहले की भट्ठी की तरह की व्यवस्था के सबसे पुराने सबूतों की खोज की गई है। स्वार्तक्रान (दक्षिण अफ्रीका) और चेसोवान्या (रिफ्ट वैली, केन्या) जैसी अन्य जगहें भी राख और हड्डी के टुकड़ों के साथ नियंत्रित आग के लगातार उपयोग को दर्शाती हैं। इसी तरह, इज़राइल में गेशर बेनोट-यागोव में 790,000 साल पहले की जली हुई लकड़ी और बीज के प्रमाण मिलते हैं। बीजिंग, चीन की झोउकौडियन गुफाओं में, 400,000 साल पहले के लकड़ी के कोयले, जले हुए हड्डी के टुकड़े और भट्ठी में राख संचय का प्रमाण इंगित करता है कि होमिनिड्स आग का उपयोग करते थे। उन्होंने क्वार्ट्ज से फलक बनाना भी सीख लिया था। वे गंड़ासे, खुरचनी, सुआ और अन्य कलाकृतियों का निर्माण भी करते थे।

निम्न पुरापाषाण काल का जीवन निर्वाह शिकार, संमार्जन (scavenging) के साथ-साथ पौधों द्वारा भोजन को इकट्ठा करने पर आधारित था। वे शायद अब मौसम की बेहतर समझ रखते थे। वे बड़े झुंड में रहते थे और कभी-कभी जब प्रचुर मात्रा में शाकाहारी खाद्य सामग्री उपलब्ध होती थी तो वे छोटे झुंडों में भी रहते थे। यह उनकी सामाजिक प्रज्ञता और लचीलेपन को प्रतिबिंबित करता है। उनके पास एक पूर्ण विकसित ब्रोका क्षेत्र (आमतौर पर होमिनिड मस्तिष्क के बाईं तरफ का अधिक प्रबल क्षेत्र जो वाक शक्ति या बातचीत करने की क्षमता से जुड़ा है) था। इसलिए, इस सबूत के आधार पर यह अनुमान लगाया जाता है कि होमिनिड्स में स्पष्ट वाक् क्षमता रही होगी। इशारों और गुर्राहटों के सहारे संचार के अलावा भाषा के विकास ने मस्तिष्क के विकास को प्रोत्साहन दिया।

निम्न पुरापाषाण संस्कृति सरल ओल्डोवान औज़ारों को अधिक जटिल एश्युलियन औज़ारों में बदलने की विकासवादी प्रक्रियाओं को प्रतिबिंबित करती है। परिवर्तनों को जीवन निर्वाह के पैटर्न, आग पर नियंत्रण, समूह संरचना और भाषा के अनुकूलन के संदर्भ में देखा जा सकता है।

बोध प्रश्न-1

1) निम्न पुरापाषाण काल की जीवन निर्वाह रणनीतियों पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) ओल्डोवान औज़ार तकनीकी पर एक संक्षिप्त नोट लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3) *होमो इरेक्टस* से जुड़े सांस्कृतिक परिवर्तन क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

3.3.3 मध्य पुरापाषाण संस्कृतियाँ

मध्य पुरापाषाण काल (लगभग 78,000 से 128,000 साल पूर्व) एक नई औज़ार तकनीकी, जीवन निर्वाह रणनीति के नए रूपों के साथ-साथ होमिनिड्स की दूसरी प्रजाति, निएंडरथलों से संबंधित था। निएंडरथल एक विशिष्ट औज़ार किट यानि मौस्तारी औज़ारों से जुड़े थे। मौस्तारी औज़ार दो प्रमुख तरीकों से बने थेः लेवालोइस (Lavallois) विधि और डिस्क कोर (disc core) तकनीक। इस तकनीक में, कोर को तराशा जाता है और फिर पूर्व निर्धारित आकार और प्रकार के फलक काटे जाते हैं। इस प्रकार, औज़ार बहुत तेज और साथ ही आकार में छोटे होते हैं। कोर धीरे-धीरे छोटा होता जाता है और समतल चकली (Flat disk) का उपयोग नोक बनाने और खुरचनी के लिए किया जा सकता है।

लेवालोइस तकनीक को छंटनी करने की विधि के रूप में समझा जाता है जो बड़े फलकों, आमतौर पर आकार में अंडाकार और तीव्र-कोण वाले, तेज़, उपयोगी किनारों को बनाने के लिए किया जाता है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इस विधि का उपयोग कोर से हटाने से पहले अंतिम उत्पाद के आकार को पूर्व निर्धारित करने के लिए किया जाता था। इस विधि का इस्तेमाल विभिन्न प्रकार के फलकों, जैसे कि उप-गोलाकार फलक, ब्लेड, ब्लेड-जैसे फलकों इत्यादि के उत्पादन के लिए किया जाता था।

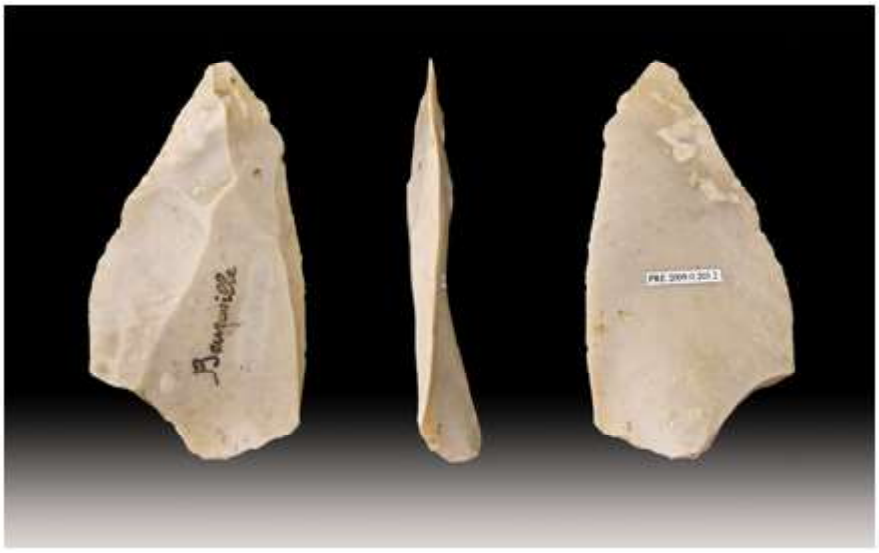

चित्र 3.4: फ्रांस के ब्यूजविले में पाया गया लेवालोइस नोकधार औज़ार
साभार: डिडिएर देस्कौएन्स, 2010
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/c/cf/Pointe_levallois_Beuzeville_MHNT_PRE.2009.0.203.2.fond.jpg

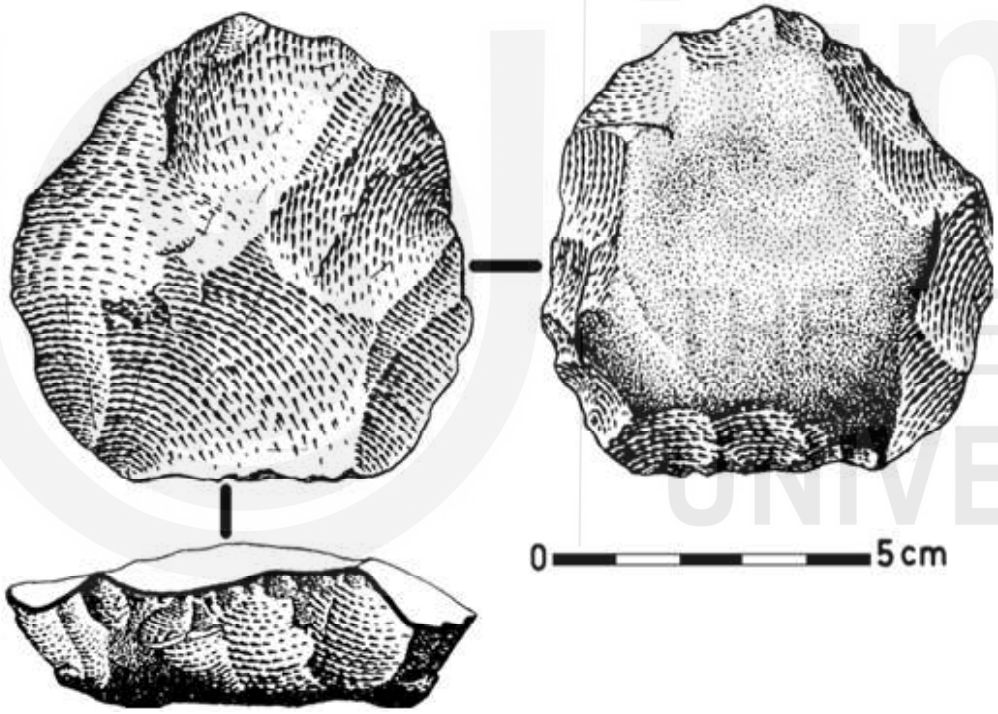

चित्र 3.5: लेवालोइस तकनीक
साभार: जोस-मैन्युअल बेनीरो अलवारेज
स्रोत: https://commons.wikimedia.org/wiki/File:Levallois-Nucleo_reiterativo.png

इस अवधि तक संयुक्त औज़ारों का उत्पादन किया जाने लगा था। मौस्तारी औज़ारों में सांस्कृतिक परिवर्तनशीलता दिखाई देती है, जिसका नाम ले मौस्तार (दक्षिणपश्चिम फ्रांस) के नाम पर रखा गया है। ये ज्यादातर फलक औज़ार थे, जिनमें सबसे आम औज़ार खुरचनी, तक्षणी और भाले की नोक, हस्त-कुल्हाड़ी के अलावा, नुकीले फलक थे जिनका इस्तेमाल मांस को अलग करने के लिए किया जाता था। उदाहरण के लिए, एक भाला, नोक और डंठल को एक साथ जोड़कर बनाया गया था। इसने निएंडरथलों को एक बेहतर शिकारी बना दिया। मौस्तारी तकनीक में बड़ी विविधता है जो विद्वानों के बीच बहस का विषय रहा है। पी. बोर्डिस (1961) के अनुसार, इन भिन्नताओं में अलग-अलग समयाविधि, और परिवर्तनीय जलवायु या मौसम परिलक्षित होते हैं। लुईस और सैली बिनफोर्ड (1966) का मानना है कि

औज़ारों की परिवर्तनशीलता निएंडरथलों द्वारा किए गए विभिन्न कार्यों का प्रतिनिधित्व करती है, जो अभी तक अस्पष्ट हैं। पत्थर की नोक वाली भाला जैसी कलाकृतियाँ बहुउद्देशीय नहीं थीं, बल्कि इनका इस्तेमाल विशिष्ट उद्देश्यों के लिए किया जाता था।

निएंडरथलों ने मौसमी दौरों द्वारा एक बड़े क्षेत्र पर अपना दख़ल जमा लिया था जहाँ वे हर वर्ष वापस आते थे। वे अपने स्थानीय पर्यावरण को अच्छी तरह से जानते थे और तदनुसार प्रवासन की योजना बनाते थे। वे गुफाओं और चट्टानों के नीचे आश्रय लेते थे। वे अच्छे शिकारी थे और विशाल जानवरों जैसे मैमथ (हाथियों की एक विलुप्त प्रजाति), हिरण, पक्षियों के अलावा जंगली घोड़ों और मछलियों का शिकार करते थे।

निएंडरथलों से जुड़ी एक और महत्वपूर्ण जटिलता उनकी धार्मिक मान्यतायें थीं। कई विद्वानों का मानना है कि निएंडरथल अपने मृतकों को दफनाते थे। चट्टानों और गुफाओं के साथ-साथ खुली जगहों में भी कब्रें पाई गई हैं। एकल कब्र अधिक आम थीं और इसमें चकमक पत्थर (flint) के औज़ार और खाद्य/मांस भी दफ़न थे। इस तरह की कब्रें इराक के ज़ाग्रोस पहाड़ों की शनीदार गुफाओं में पाई गई हैं। फ्रांस में एक और स्थल ला चैपल-ऑक्स सेंट्स है जहाँ ऐसी कब्रों के सबूत मिलते हैं जहां मृतक, छाती पर जंगली-भैंसे के पैर, हड्डी के औज़ारों और अन्य मलबों के साथ दफनाये गए हैं। कई विद्वानों का मानना है कि ऐसा परिस्थितिवश हुआ और ये जानबूझकर दफन नहीं किये गए हैं। फ्रांस में ले आइज़ियों में एक चट्टान आश्रय ला फेरासी में दो वयस्कों और चार बच्चों को एक शिविर में एक साथ दफनाये जाने के सबूत मिलते हैं। फेगन (2014) का कहना है कि हालांकि निएंडरथल अपने मृतकों को दफनाते थे लेकिन मृत्युपरान्त जीवन की अवधारणा के साथ इसे जोड़ना संदेहात्मक है।

मध्य पुरापाषाण काल में न केवल बेहतर औज़ार और जटिल शिकार रणनीतियों के संदर्भ में बल्कि सामाजिक और पर्यावरणीय अनुकूली रणनीतियों के संदर्भ में भी बदलाव आया। इसके अलावा हमारे पास दफन की प्रथाओं के संदर्भ में कुछ अनुष्ठानों के सबूत मिलते हैं जो प्रारंभिक मनुष्यों को अन्य जानवरों से अलग करते हैं।

बोध प्रश्न-2

1) आप निम्न और मध्य पुरापाषाण संस्कृतियों में कैसे अंतर करेंगे?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2) निएंडरथल और उनकी संस्कृति पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3.3.4 उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियाँ

अभी तक ज्ञात पूर्ण विकसित मानव प्रजाति क्रो-मेगनॉन है जिसका नामकरण दक्षिण पश्चिम फ्रांस के ले आइजियों के शैलाश्रय के नाम पर किया गया है। वे दक्षिण पश्चिम और मध्य यूरोप में 40,000 वर्ष पूर्व आकर बसे थे और 35,000-40,000 वर्ष पूर्व दक्षिण पश्चिम फ्रांस में प्रविष्ट हुए। उत्तर पुरापाषाण काल की औज़ार तकनीकी ब्लेड तकनीकी के रूप में जानी जाती है। क्रो-मेगनॉन द्वारा पैने लम्बे समानान्तर सहायक रिक्त स्थानों का निर्माण किया गया जिनका प्रयोग अन्य कार्यों के अतिरिक्त शिकार, चीर-फाड़ करने, त्वचा के प्रक्रमण (processing), लकड़ी के काम अथवा वस्त्र उत्पादन आदि विभिन्न प्रकार के क्रियाकलापों के लिए विस्तृत श्रेणी की कलाकृतियों के निर्माण में किया जाता था। ब्लेड के औज़ार उपयोगी औज़ार थे जैसे खुरचनी, सुआ, चाकू, छिद्रित सुई वाले तक्षण, आदि। औज़ार हड्डियों, पत्थरों तथा हाथीदांत के भी बने होते थे। चकमक, चर्ट (chert) अथवा लावा कांच (obsidian) का प्रयोग आमतौर पर औज़ारों के उत्पादन में किया जाता था। उन्होंने तक्षणी, जो कि एक उत्कीर्णक (engraving) औज़ार था तथा जिसने बाहरसिंगों के सींगों और हड्डियों पर कार्य की दक्षता में योगदान दिया, का परिशोधन किया। हड्डियों तथा बारहसिंगों के सींगों से औज़ार बनाने की तकनीक खांचा और खपच्ची (groove and splinter) तकनीकी के नाम से जानी जाती थी।

इस काल की अर्थव्यवस्था संग्रहण तथा आखेटक की थी, जिसमें मछली पकड़ना भी शामिल था। पश्चिम तथा मध्य यूरोप के क्रो-मेगनॉनों ने अधिक विस्तृत तथा परिष्कृत आखेटक सभ्यता का विकास किया। ये सभ्यतायें न केवल औज़ारों के अर्थ में भिन्न थीं, बल्कि सामाजिक तथा धार्मिक जीवन के संदर्भ में भी इनमें भिन्नता थी। इन क्षेत्रों के क्रो-मेगनॉनों ने नदी घाटियों की ओर प्रवास किया। उन्होंने पेड़-पौधों से खाद्य पदार्थ संग्रहण के अतिरिक्त बड़े जानवरों, बल्कि छोटे जानवरों, जैसे खरगोश, भेड़िये, पक्षियों, इत्यादि का भी शिकार किया। जैसा कि फेगन वर्णित करते हैं कि वे ज्यादातर छोटे समूहों में रहते थे तथा जीवन निर्वाह के लिए विभिन्न पशुओं के शिकार तथा संग्रहित खाद्य पदार्थों पर निर्भर थे तथा पुनः वे बसंत, गर्मी तथा प्रारम्भिक पतझड़ के मौसम में बड़े समूह में एकत्रित हो जाते थे जब रेंडियर प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते थे। जाड़े के मौसम में वे फिर छोटे-छोटे समूहों में विभिन्न दिशाओं में बिखर जाते थे।

कुछ उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियाँ

उत्तर पुरापाषाण काल की प्रमुख संस्कृतियों में से एक **चेटेलपरोनियन संस्कृति** है जो पश्चिमी यूरोप में प्रभावशाली थी और लगभग 35,000-30,000 बी पी में फली-फूली। यह संस्कृति ब्लेड बनाने के लिए जानी जाती है। सबसे आम औज़ारों में तक्षणी फ़लक-खुरचनी, चाकू, छेनी इत्यादि के अलावा, दांतेदार औज़ार (पत्थर के औज़ार जिनमें एक या अधिक किनारे होते हैं), नोकदार औज़ार (points) थे। इस संस्कृति का विशिष्ट औज़ार एक ब्लेड से बना हुआ चेटेलपरोनियन चाकू था, जिसका एक किनारा धारदार, जबकि दूसरा किनारा घुमावदार या कुंद था। इस संस्कृति के लोगों ने हड्डी के औज़ार भी बनाए। उनकी आवास संरचनायें बहुत अच्छी तरह से व्यवस्थित थीं। अधिकांशतः आवास कैल्सरस ब्लॉक (यानी अधिक कैल्शियम कार्बोनेट युक्त मिट्टी) के साथ गोलाकार होते थे, जो सिगड़ी (hearth) के आसपास स्तम्भ-छिद्र या जमीन पर गड़े हुए विशाल गजदंत के साथ बनाये जाते थे।

इस अवधि की एक और महत्वपूर्ण संस्कृति **पत्तीरूपी नोक संस्कृति** (Leaf-shaped Point Culture) है। यह संस्कृति ब्रिटेन और रूस में कुछ स्थानों पर पहले की संस्कृतियों के समकालीन ही थी। चेटेलपरोनियनों की तरह, इस संस्कृति के लोगों ने भी चाकू बनाये थे लेकिन वे एक पर्ण या पत्ते के आकार के थे, जिसके आधार पर इस संस्कृति का नामकरण

हुआ। इस संस्कृति की एक महत्वपूर्ण बस्ती ले-कॉटे, फ्रांस में है। इस संस्कृति को महत्वपूर्ण माना जाता था क्योंकि इसका विकास मध्य यूरोप में ग्रेवेटियन स्थलों (उत्तर पुरापाषाण के अंतिम पुरातात्विक उद्योग) के गठन के कारण हुआ था।

हालांकि, ग्रेवेटियन संस्कृति से पहले **ऑरिग्नेसिअन संस्कृति** थी जिसका काल निर्धारण पश्चिम एशिया में लगभग 40,000 बी पी में किया जा सकता है। यह क्रो-मैगनॉन मानवों की संस्कृति मानी जाती है। इस औज़ार संस्कृति को चोंचदार तक्षणी, चपटी पेंदी वाली खुरचनी, और छोर खुरचनी के अलावा हड्डी के औज़ारों की कई किस्मों के द्वारा दर्शाया जाता है। इस संस्कृति में छिद्रित दांतों के अलावा पेंडेंट (pendent), हाथीदांत के बने मनके, बूंद के आकार के पेंडेंट और अंगूठियों जैसे गहनों के साक्ष्य भी मिलते हैं। इसके अलावा, हाथीदांत से बनी चीजों के साक्ष्य स्वैबियन जुरा, जर्मनी की गुफाओं में पाए गए हैं जहां आमतौर पर जानवरों को गोलाकार रूप में चित्रित किया गया है। अन्य जगहों पर भी चट्टानों के नीचे बने आश्रय तथा इनमें जानवरों और मनुष्यों का प्रतिनिधित्व करने वाली नक्काशी के नमूने पाए गए हैं। ले-आइज़ीज़, डॉर्डोग्न, फ्रांस में एक क्रो-मैगनॉन आश्रय में एक सामूहिक कब्र भी पाई गई है।

27,000-22,000 बी पी के बीच, **ग्रेवेटियन संस्कृति** को बारीक़ या महीन ब्लेडों के लिए जाना जाता है, जिसे ग्रेवेटियन नोक (points) कहा जाता है। वे कांटों और चपटी पत्ती के आकार वाले बर्छी का भी इस्तेमाल करते थे। कलछी, कुदाली (picks), कुल्हाड़ी (picke) जैसे अन्य औज़ारों का इस्तेमाल आवास संरचनाओं के निर्माण के लिए किया जाता था। वे हड्डियों और बारहसिंघे के सींग दोनों का इस्तेमाल औज़ार बनाने के लिए कच्चे माल के रूप में करते थे। गोलाकार आवास क्रबों और मूर्तियों के निर्माण से सम्बंधित खुले इलाकों के साथ पाए गए हैं। यह दर्शाता है कि ये स्थायी आवास रहे होंगे जिनमें प्राकृतिक आश्रय और खुले मैदान शामिल थे।

ग्रेवेटियन विशेष रूप से 'वीनस मूर्तियों' के लिए जाने जाते थे। ये व्यापक नितम्बों, लटके हुए स्तनों और बड़े कूल्हों वाली महिलाओं की मूर्तियां थीं। हाथ-पैर अधिकतर टूटे हुए थे, और इन मूर्तियों के चेहरों में कोई विशेषताएं नहीं थीं। डोलनी वेस्टोनिस, मोराविया, चेक गणराज्य में मूर्तियों को नरम पत्थरों, हाथीदांत या टेराकोटा से बनाया जाता था। मोराविया के साथ-साथ यूक्रेन में स्त्रियों की मूर्तियों के अलावा, गैंडा, मैमोथ (विशालकाय हाथियों की प्राचीन प्रजाति) आदि जानवरों की मूर्तियां भी पाई गईं हैं। ऐसा माना जाता है कि ये मूर्तियां सांस्कृतिक या धार्मिक प्रथाओं के लिए उपयोग में लाई जाती थीं।

लगभग 20,000-15,000 बी पी की **सोल्यूट्रियन संस्कृति** ज्यादातर फ्रांस और स्पेन में पाई जाती है, जो संभवतः अपने से पहले की ग्रेवेटियन संस्कृति का विस्तार थी। इस संस्कृति ने हड्डियों से विभिन्न प्रकार की नोकों (points), कांटें (barbs), सुईयों, छेद वाली सुइयों का उत्पादन किया। उनकी अर्द्धगोलाकार आवासीय संरचनाएं थीं और यहां गुफा चित्रों और नक्काशी के सबूत भी मिलते हैं। सोल्यूट्रियन बस्तियों के ब्लॉक्स पर की गई नक्काशी तुंदिल, छोटे पैरों वाले जानवरों का प्रतिनिधित्व करती है। इस संस्कृति का जल्द ही पराभव हो गया और इसने पश्चिम यूरोप में मेग्दालेनियन संस्कृति के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

मेग्दालेनियन संस्कृति को कालानुक्रम में लगभग 18,000-8,000 बी पी निर्धारित किया जा सकता है। यह संस्कृति जटिल बस्तियों के निर्माण के लिए जानी जाती है। इस संस्कृति के लोगों ने भी संयुक्त औज़ार जैसे **सूक्ष्मपाषाण प्रक्षेप्य** (projectile), धनुष, कांटेदार बर्छी और लघु ब्लेड (bladelets) बनाना सीख लिया था। यह संस्कृति अपनी कलात्मक उपलब्धियों, विशेष रूप से गुफा कला के लिए भी जानी जाती है, जिस पर अगले उप-भाग में चर्चा की गई है।

लेकिन इससे पहले कि हम उस पर जाएं, यह याद रखना महत्वपूर्ण है कि अब तक उत्तर

पुरापाषाण काल औज़ारों, आवास संरचनाओं, शिकार रणनीतियों आदि के संदर्भ में क्षेत्रीय विविधताओं द्वारा पहचाना गया। अब हम उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियों के विकास को उनकी कलात्मक सक्रियता द्वारा चिह्नित कर बारी-बारी से समझेंगे।

3.3.5 कलात्मक अभिव्यक्तियां

48,000 साल पहले यूरोपियों ने गुफा की दीवारों पर चित्र बनाने के अलावा मनके, पेंडेंट (pendants), छिद्रित दांत, इत्यादि जैसे गहने बनाने की कला भी सीख ली थी। पूर्व-ऐतिहासिक कला की दो प्रमुख किस्में हैं: विचल (mobilier) और पार्श्विक (parietal)। गतिशील वस्तुओं पर निष्पादित सजावट या कला कार्य या जिसे एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाया जा सकता है उसे विचल कला या गृह कला कहा जाता है। गुफा की दीवारों और छत में पाई जाने वाली कला को गुफा कला या पार्श्विक कला कहा जाता है। इसके अलावा, प्रागैतिहासिक कला विभिन्न रूपों जैसे नक्काशी, चित्रकला, उभरी हुई नक्काशी (bas-relief) इत्यादि में नजर आती है और कला के इन सभी रूपों को उत्तर पुरापाषाण कला के रूप में देखा जा सकता है। कलात्मक अभिव्यक्ति का एक अन्य महत्वपूर्ण रूप धारी या रेखाओं द्वारा अलंकरण (flutting) था, जिसमें गुफा की दीवारों पर टेढ़ी-मेढ़ी लकीरों के चिन्ह अंकित होते थे। विद्वानों का मानना था कि ये बच्चों द्वारा बनाए गए थे लेकिन वयस्कों द्वारा समर्थित थे क्योंकि ये दीवारों पर काफी ऊंचाई पर पाए गए हैं। यह माना जाता है कि इन कला रूपों की सादगी के आधार पर इन्हें बच्चों को सौंपा गया था। हालांकि विद्वानों का यह भी मानना है कि इस तरह के कला रूपों के कुछ अनुष्ठानिक उद्देश्य भी हो सकते हैं।

चित्रकला संज्ञानात्मक क्षमता और प्रागैतिहासिक मानव की अधिक भावनात्मक शक्ति को दर्शाती है, जिसके कारण इसे संचार के एक तरीके के रूप में समझा गया था। ऐसा माना जाता था कि वे प्रतीकात्मक अर्थों का प्रतिनिधित्व करते हैं जिन्हें समझना मुश्किल है। यह एक ही निरंतरता में अपने सामाजिक, आध्यात्मिक और प्राकृतिक संसारों की गहरी समझ का प्रतिनिधित्व करता है (फेगन, 2014)।

पुरापाषाण कला पत्थर, हड्डी, बारहसिंगे के सींग, लकड़ी, मिट्टी, और हाथीदांत पर निष्पादित की जाती थी। कला में 'वीनस मूर्तियों' के चित्रण, पेंडेंट और मनके जैसे गहने और जर्मनी में पाई जाने वाले बांसुरी जैसे संगीत वाद्ययंत्र शामिल हैं। मैग्डालेनियन कांटेदार बर्छी, भालों को अन्य प्राकृतिक नक्काशियों द्वारा भी सजाते थे। स्टीफन मिथेन (1995) का मानना है कि उच्च संज्ञानात्मक क्षमता के दो प्रमुख परिणाम हुए हैं, पहला जटिल सामाजिक संबंध और दृश्य प्रतीकात्मकता और दूसरा विकास, यानी संचार और अभिव्यक्ति के साधन के रूप में कला का विकास।

शैल चित्रण कला

सबसे मशहूर उत्तर पुरापाषाण गुफा कला लस्कॉक्स (दक्षिण पश्चिम फ्रांस), ले कैम्बरेल्स (ले-आइज़िस डे टेयॉक, डॉरडोग्न, फ्रांस), अल्तामीरा (कैंटाब्रिया, स्पेन), और ग्रोत डी शॉवेट, फ्रांस आदि स्थानों पर पाई गई हैं। इन स्थानों की गुफा कला आमतौर पर पशुओं के रूपांकन, मानव आकृतियों, अवताररूपी मानवों (जैसे मानव-पशु रूपों) के चित्रों को दर्शाती है। वे अमूर्त और गैर-प्रकृतिवादी संकेतों का भी प्रतिनिधित्व करते हैं, जिन्हें आमतौर पर तंबूरूप (tectiform) कहा जाता है। इस कला को दीवार पर चित्रित किया गया था या चट्टान की दीवार के प्राकृतिक आकार पर चित्रित किया गया था। नक्काशी और उभार वाले चित्रों (bas-relief) को गुफा के नजदीक और आसपास पाए गए मिट्टी और पत्थर के स्लैब में भी दोहराया गया था। चित्र स्वाभाविक रूप से पाए जाने वाले गेरू, खनिज ऑक्साइड, इत्यादि को पीसकर और जानवरों के खून और मूत्र, पानी आदि जैसी अन्य सामग्रियों के साथ पीसकर तैयार किए गए वर्णक के उपयोग से बनाये जाते थे। चित्र की रूपरेखा तैयार करने के लिए काले, लाल और कभी-कभी पीले रंग के रंगों का मिश्रित या अलग-अलग इस्तेमाल

किया जाता था। फ्रांस के ग्रोट डी शॉवेट में, लगभग 30,000 बी सी ई पुराने तीन सौ से अधिक चित्र पाए गए हैं। भागते हुए जानवरों के सरों का अतिव्यापी (overlapping) चित्रण चित्रकला में गतिशीलता का आभास देते हैं।

लगभग 16,000 बी सी ई पुराने दक्षिण पश्चिम फ्रांस में मैग्डालेनियन स्थलों जैसे लेस्कॉक्स के चित्रों में जंगली घोड़ों, बैलों, रेंडियर और अन्य जानवरों को दर्शाया गया है। इन चित्रों के लिए उपयोग किए जाने वाले रंग खनिजों से प्राप्त किए गए थे और सबसे आम हेमेटाइट, अर्थात लाल रंग था। इसके अलावा, प्राकृतिक या प्रज्वलित मैंगनीज, मिट्टी और चारकोल में मिश्रित रक्त या पशु मज्जा या वसा को भी रंगीन घटकों के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। प्रारंभिक मानव ने अपनी उंगलियों का उपयोग करने के अलावा पंखों, टहनियों और बालों को ब्रश या कूँची के रूप में इस्तेमाल किया। वे ज्यादातर चट्टान की प्राकृतिक सतह पर चित्र बनाते थे। वे आमतौर पर सादा और चिकनी सतह पसंद करते थे, लेकिन यह सतह को चुनने का एकमात्र मानदंड नहीं था क्योंकि वे ऊंचाई पर, छतों पर और गहरी अंदरूनी गुफाओं पर भी चित्र बनाते थे। जानवरों के शरीर को आमतौर पर खाली छोड़ दिया जाता था और चित्र छोटे से लेकर बहुत बड़े आकार के होते थे।

चित्र 3.6: अल्तामीरा गुफाओं की चित्रकला
साभार: मूसियो दे अल्तामीरा वाई डी. रोड्रिगुएज़, 2010
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/8/8b/9_Bisonte_Magdaleniense_polícromo.jpg

विद्वानों के पास इन कला रूपों के पीछे बनाए जाने के उद्देश्य के संबंध में सर्वसम्मतिपूर्ण विचार नहीं हैं। कुछ विद्वानों का मानना है कि ये कला रूप अनुष्ठानिक विश्वास का प्रतिनिधित्व करते हैं। अन्य लोग तर्क देते हैं कि वे सौंदर्य उद्देश्य के लिए बने थे। जबकि कुछ अन्य विद्वान पुरापाषाण गुफाओं की कला को जादू-टोने के साथ जोड़ते हैं। गॉर्डन चाइल्ड जैसे विद्वानों ने तर्क दिया कि ये शौकिया कला नहीं थी, बल्कि इन्हें कलात्मक ढंग से बनाया गया था तथा इन प्रारंभिक समाजों में ऐसे विशेषज्ञ अवश्य रहे होंगे जिन्होंने ऐसी पेंटिंग की हो। इससे सवाल उठता है कि निर्वाह अर्थव्यवस्था पर आधारित इस समाज ने इतनी मुश्किल पहुँच वाली इन गुफाओं में चित्रों को बनाने में समय और ऊर्जा क्यों लगाई। एच. ब्रेउल (फेगन, 2014 में उद्धृत) का मानना है कि आखेटक-संग्राहक समूह इन गुफाओं में अनुष्ठान किया करते थे और इस तरह के कार्य शिकार की सफलता सुनिश्चित करने के लिए थे। वास्तव में, लुईस-विलियम्स और डॉउसन (पालासीओ-पेरेज़, 2013 में उद्धृत) जैसे

कुछ विशेषज्ञों का तर्क है कि गुफा कला शमनवादी (आत्मा आदि में विश्वास वाले) अनुष्ठानों से जुड़ी हुई थी और जानवरों के चित्र शमनों के लिए प्राणियों की आत्मा या जीवन शक्ति की छवियां थीं। इन विचारों के विपरीत, कई विद्वानों का मानना है कि गुफा कला केवल प्रारंभिक मनुष्यों की दुनिया का प्रतिनिधित्व करती है। उन्हें यूको और रोसेनफेल्ड (पालासिओ-पेरेज़, 2013 में उद्धृत) द्वारा टोटेमवाद (totemism) के सहानुभूतिपूर्ण जादू के रूप में भी समझा गया है। इस प्रकार पुरापाषाण कला की व्याख्या शुद्ध सौंदर्यशास्त्र से लेकर कार्यरूपी अथवा उपयोग रूपी के रूप में की गई।

बोध प्रश्न-3

1) यूरोप में उत्तर पुरापाषाण संस्कृतियों पर एक नोट लिखिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) शैल चित्रण कला का मूल्यांकन कीजिए और बताइये कि यह उत्तर पुरापाषाण काल की जटिलता का प्रतिनिधित्व कैसे करती है।

.....

.....

.....

.....

.....

3.4 मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

मेसोलिथिक काल शब्द का अर्थ मध्यपाषाण काल है। इसे आमतौर पर नवपाषाण काल की प्रस्तावना के रूप में समझा जाता है। इस अवधि को औज़ारों के आकार में कटौती और असाधारण जलवायु परिवर्तनों के संदर्भ में पहचाना जाता है। इस काल ने हिमयुग का अंत और गर्म अवधि की शुरुआत देखी और फिर बाद का ठंडा चरण भी देखा। गर्म अवधि में समुद्र के स्तर में वृद्धि हुई। तट, मुहाना और झील अत्यधिक उत्पादक और जलीय संसाधन क्षेत्र बन गए, अतः उनका अच्छी तरह से उपयोग किया गया (फेगन, 2014)। इन परिवर्तनों का वनस्पति के साथ-साथ जानवरों पर भी असर पड़ा, उदाहरण के लिए रोएँदार (ऊनी) मैमथ गायब हो गए और हिरण अधिक आम हो गए। भोजन के लिए गिरीदार फल वाले पौधे अधिक प्रचलित हो गए। भोजन में वृद्धि ने जनसंख्या वृद्धि में योगदान दिया होगा।

3.4.1 पर्यावरण संबंधी बदलाव

होलोसीन युग, एक भूगर्भशास्त्रीय विभाजन जो 13,700 बी पी से शुरू हुआ, में पर्यावरण संबंधी बड़े परिवर्तन देखे गए। अस्थिर और परिवर्तनशील जलवायु पुरापाषाण काल के अंत और नए लघु पाषाण औज़ारों, जिसे सूक्ष्मपाषाण कहा जाता है, के शुरुआती काल में देखी जा सकती है, जिसके साथ शिकार रणनीतियों में धनुष और बाण का इस्तेमाल और गहन संग्रहण की प्रक्रिया की शुरुआत हुई (इसकी चर्चा हम इस उप-भाग में करेंगे)। जलवायु शुष्क और बंजर होती जा रही थी और इसके साथ ही इस क्षेत्र में वनस्पतियों और जीवों में बदलाव हो रहे थे। जनसंख्या में भी वृद्धि हुई थी, जिसकी वजह से दो प्रकार के बदलाव

आवश्यक हो गए थे। पहला, औज़ारों के उपयोग में परिवर्तन और दूसरा, उपलब्ध खाद्य संसाधनों के उपयोग में परिवर्तन।

फ्रांस के नजदीक, मा दे'अज़िल की गुफाओं की खोज के साथ मध्यपाषाण काल को एक विशिष्ट सांस्कृतिक काल के रूप में पहचाना जाने लगा। इन जगहों पर उत्तर पुरापाषाण काल के मैग्देनियन औज़ारों की जगह मध्यपाषाण औज़ार पाए गए और इस खोज के साथ यूरोप में एक विशिष्ट चरण की पहचान हुई। मध्यपाषाण काल को अक्सर पुरापाषाण और नवपाषाण काल के बीच की संस्कृति के रूप में परिभाषित किया जाता है।

डी. प्राइस (1991) के अनुसार मध्यपाषाण काल केवल सूक्ष्मपाषाण औज़ारों के उपयोग या वन या तटों के शोषण या कुत्ते को पालतू बनाने से ही नहीं जुड़ा था। इसे कृषि की शुरुआत से पहले की उत्तर हिमनदीय काल के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। क्लार्क यह भी मानते हैं कि मध्यपाषाण काल अनिवार्य रूप से संस्कृति के अंत का उद्घोषक होने की बजाय संस्कृति के विकास में मौलिक परिवर्तनों की प्रस्तावना का काल था।

3.4.2 सूक्ष्मपाषाण औज़ार

इस अवधि से जुड़े औज़ारों को सूक्ष्मपाषाण औज़ार कहा जाता है। ये आकार में छोटे, धारदार और बहुत उपयोगी थे। इस अवधि में बेहतर संयुक्त औज़ारों और हथियारों के संदर्भ में विकास भी देखा गया। सूक्ष्मपाषाण औज़ार आमतौर पर ज्यामितीय रूपों में बनाये जाते थे, जैसे त्रिकोणीय और विषमबाहू आकार के, लेकिन उन्हें चंद्राकार और अन्य गैर ज्यामितीय रूपों में भी बनाया जाता था। इस अवधि में पहले की अवधि की ब्लेड तकनीकी को और संशोधित किया गया था। यह अवधि धनुष और तीरों के उपयोग से भी जुड़ी हुई है, जिसने मध्यपाषाण मानव को बेहतर शिकारी बना दिया होगा। इस अवधि को कलाकृतियों के स्थानीयकरण और नई संस्कृतियों के गठन के आधार पर चिह्नित किया गया है जैसा कि अगले उप-भाग में चर्चा की जाएगी।

चित्र 3.7: सूक्ष्मपाषाण औज़ार
साभार: यॉर्क म्यूजियम ट्रस्ट, एली कॉक्स, 2018
स्रोत: https://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/d/d0/Microlith_%2C_Mesolithic_%28FindID_628327%29.jpg

मछली पकड़ना भी आमतौर पर इस अवधि के दौरान शुरू हुआ था जैसा कि औज़ार किट से देखा जा सकता है जिसमें अब कांटे (barb), बर्छी (harpoon), भाले, इत्यादि शामिल थे जो मछली पकड़ने के विशेष औज़ार थे। औज़ार पत्थर, हड्डी और लकड़ी से बने थे। चाकू, कुल्हाड़ी (axe), भाले, ब्लेड, लकड़ी के तीर जैसे अन्य औज़ार भी इस काल में पाए गए हैं। धारदार ब्लेड जोर से आघात मारने वाली (pressure flaking) तकनीक के द्वारा बनाए गए थे और इस प्रकार औज़ार समानांतर किनारों के साथ संरचना में अधिक सुडौल थे। इस अवधि तक, यूरोप के कुछ हिस्सों में मानव ने सुडौल संरचना वाले प्रक्षेप्य औज़ारों की नोक (points) बनाना सीख लिया था।

3.4.3 जीवन निर्वाह का तरीका और सामाजिक जटिलता

मध्यपाषाण अर्थव्यवस्था शिकार, संग्रहण और मछली पकड़ने पर आधारित थी। मध्यपाषाणकालीन मानव नदी के किनारे अर्द्ध-स्थायी या स्थायी बस्तियों में समूहों में रहते थे। इंग्लैंड में स्टार कैर लगभग 9500 बी पी का एक महत्वपूर्ण मध्यपाषाण स्थल है। इसके प्रमाण मिलते हैं कि इस अवधि तक मनुष्यों ने कुत्ते को पालतू बनाना या उससे मित्रता करना सीख लिया था। हालांकि मध्यपाषाण अर्थव्यवस्था में पिछली उत्तर पुरापाषाण अर्थव्यवस्था से कोई भी विशिष्ट परिवर्तन नहीं दिखाई देता।

फेगन (2014: 292) उल्लेख करते हैं कि मध्यपाषाण काल एक अनिश्चित जलवायु स्थितियों में भोजन एकत्रित करने की रणनीतियों की तीव्रता के साथ आर्थिक और सामाजिक जीवन में व्यापक भिन्नता की अवधि थी। उत्तर पुरापाषाण काल से ही मानव की नई परिस्थितियों में अनुकूलित होने की क्षमता दिखाई देती है। यह मध्यपाषाण काल के दौरान और अधिक प्रासंगिक हो गई। इन रणनीतियों में नए औज़ार शामिल थे जो समुद्री स्तनधारियों, मछली आदि जैसे जलीय संसाधनों का शिकार करने में उपयोगी थे। बिनफोर्ड (फेगन, 2014 में उद्धृत) के अनुसार मध्यपाषाण काल के दौरान मनुष्य मछली की उपलब्धता के कारण नदी घाटी के चारों ओर बस गए। जल संसाधनों की उपलब्धता ने समाजों को एक स्थान पर बसने और जनसंख्या वृद्धि की परिस्थितियों में रह-सकने की कुशलता प्रदान की। दूसरी ओर सी. गैंबल (फेगन, 2014 में उद्धृत) का मानना है कि नदी घाटियों में बदलाव जनसंख्या में वृद्धि का परिणाम था जिससे भोजन की कमी हुई और इसका सामना करने के लिए जलीय संसाधन ही एकमात्र उपाय था। मछली पकड़ने के काम में सघन श्रम लगता था और यह भू-खाद्यानों की तरह पौष्टिक भी नहीं था। डेविड यसनर (फेगन, 2014 में उद्धृत) एक अलग परिप्रेक्ष्य लेते हैं और तर्क देते हैं कि बदलते हुए पर्यावरण, आबादी का दबाव, और खाद्यानों की कमी की वजह से जलीय संसाधनों की तरफ रुख करना प्रारम्भिक मानव के लिए 'सर्वाधिक उपयोगी रणनीति' थी।

3.4.4 यूरोप में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

यूरोप में मध्यपाषाण काल में जलवायु परिवर्तनों और नए खाद्य संग्रह और शिकार की रणनीतियों के साथ-साथ विभिन्न औज़ार संस्कृतियों में बदलाव के परिणामस्वरूप विभिन्न नई संस्कृतियों का प्रादुर्भाव देखा जा सकता है। एज़िलियन, सॉवेटेरियन, प्रारंभिक टारडेनॉइसेन, एस्च्युरियन और लार्नियन संस्कृतियाँ पश्चिमी यूरोप में सबसे प्रमुख थीं जबकि मैग्लेमोसियन, किचन-मिडन और कैम्पेग्नियन उत्तरी यूरोप में प्रमुख थे। पश्चिमी यूरोप में मध्यपाषाण संस्कृति में घोंघा के महत्व को देखा जा सकता है। समलम्ब (Trapezoidal) लघुपाषाण औज़ार कई स्थलों पर बड़ी संख्या में पाए गए थे (गैबल, 1958)।

लगभग 10,000 बी पी की उत्तरी यूरोपीय संस्कृतियों को धनुष और तीर, कुत्ते को पालतू बनाना, डोंगी (एक संकीर्ण जल-खेवन नाव) का उपयोग और अन्य समुद्री नौकाओं के

अलावा जाल, हुक आदि मछली पकड़ने के औज़ारों से पहचाना जाता है (प्राइस, 1991)। कुल्हाड़ी, सेल्ट (celts; पत्थर से बने लंबे और पतले औज़ार), प्रक्षेप्य (हड्डी, लकड़ी, बारहसिंगों के सींग और पत्थर से बने) जैसे औज़ार उत्तरी यूरोप में लगभग 6000 बी पी में मध्यपाषाण काल के अंत में दिखाई देते हैं। यूरोप, विशेष रूप से उत्तरी यूरोप में, हिमनदीय बर्फ के पिघलने के परिणामस्वरूप समुद्र के स्तर में बदलाव देखा गया। इससे जलीय संसाधनों में वृद्धि हुई जिनका उपयोग इस अवधि के दौरान अच्छी तरह से किया गया।

3.4.5 स्कैंडिनेविया और ब्रिटेन में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

स्कैंडिनेविया और ब्रिटेन में अच्छी तरह से चिह्नित आबादी का दबाव और स्थायी आवास मध्यपाषाण काल की विशेषता है। तटीय गांवों से समुद्री और वन संसाधनों के शोषण के आधार पर मिश्रित अर्थव्यवस्था के साक्ष्य मिलते हैं। बाद की अवधि में लगभग 4000 बी पी तक मिट्टी के बरतन बनाने की शुरुआत हो गई थी। यहाँ की मध्यपाषाण संस्कृति को तीन कालों में बांटा जा सकता है – मैग्लेमोज, कांगमोस और एर्टेबोले।

मैग्लेमोज संस्कृति (लगभग 9500-7700 बी पी) की विशेषता आखेटक और चारागाही (भोजन की खोज में घूमने वाली) अर्थव्यवस्था के साथ नदी घाटी बस्तियाँ थीं। ज्यादातर बस्तियां ग्रीष्मकालीन झील के किनारे थीं। साक्ष्य समुद्री संसाधनों पर निर्भरता का संकेत देते हैं क्योंकि यहाँ मछलियों की बहुत सी हड्डियाँ पाई गई हैं। इस संस्कृति के लोग ज्यादातर छोटी झोपड़ियों में रहते थे जिनमें कभी-कभी कुछ में फर्श भी उनके द्वारा निर्मित किए गए थे। उदाहरण के लिए, डेनमार्क में उल्केस्ट्रप में छाल और लकड़ी के फर्श के साथ झोपड़ियाँ पाई गई हैं (फेगन, 2014)।

मैग्लेमोज़नों की तरह, कांगमोस संस्कृति (लगभग 7700-6600 बी पी) भी नदी के किनारों के पास विकसित हुई। उत्तर-पश्चिम स्वीडिश तट के पास सेगेब्रो इस संस्कृति का एक प्रमुख स्थल है। इस स्थान की विशेषता विषमकोण नोक वाले तीर हैं। शिकार अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार था। कांगमोस संस्कृति के बाद एर्टेबोले संस्कृति प्रकाश में आई।

एर्टेबोले संस्कृति (लगभग 6600-5300 बी पी) हड्डी, बारहसिंगे के सींग और लकड़ी के औज़ारों के साथ एक विस्तृत औज़ार तकनीक वाली संस्कृति थी। अर्थव्यवस्था शिकार पर आधारित थी। मत्स्य पालन भी एक महत्वपूर्ण गतिविधि थी क्योंकि मछली उनके आहार का एक अभिन्न अंग था। वे कब्रिस्तान में अपने मृतकों को दफन करते थे और कब्र में शरीर को विभिन्न तरीकों से रखते थे। कभी-कभी कुत्ते को भी मानव शरीर के साथ दफनाया जाता था। दफन के तरीके कई प्रकार की सामाजिक भिन्नताओं को दर्शाते हैं। ज़ीलैण्ड (डेनमार्क का सबसे बड़ा द्वीप) और स्कैनिया (स्वीडन का दक्षिणी प्रांत) में पाए गए कब्रिस्तान सामाजिक और आनुष्ठानिक जटिलता में वृद्धि को दर्शाते हैं। दक्षिण स्कैनिया के स्केटहोम में, जहाँ 40 क़ब्रें मिली हैं, कब्रिस्तान की खुदाई में शरीरों को भिन्न तरीकों से लिटाकर दफ़न करने के और कई कब्रों में कुत्तों के साथ दफ़न करने के प्रमाण मिले हैं।

एर्टेबोले संस्कृति के औज़ारों में कुल्हाड़ी, खुरचनी, छिद्रित सींग आदि शामिल हैं। कुछ खाना पकाने के बर्तन भी पाए गए थे। इन स्थलों से मानव द्वारा तटीय और अंतर्देशीय स्थानों पर साल भर स्थायी रूप से बसावट के साक्ष्य भी मिलते हैं। उनके पास निर्वाह के कई आधार थे जिनमें घूरा शैल और पशु अवशेषों के साक्ष्य मिलते हैं।

3.4.6 दक्षिण पश्चिम एशिया में मध्यपाषाण संस्कृतियाँ

दक्षिण पश्चिम एशिया पौधों और विशेष रूप से जानवरों को पालतू बनाने वाली प्रवृति के विकास को समझने के लिए एक आकर्षक क्षेत्र रहा है। यह वह क्षेत्र है जो खाद्य उत्पादन का प्रथम स्थल बन गया। इसकी शुरुआत मध्यपाषाण काल की मुशाबियान और केबरान

संस्कृति के उद्भव के साथ हुई, जिसके बाद नातुफियान संस्कृति आई। मुशाबियान संस्कृति पूर्वी भूमध्य क्षेत्र में लगभग 14,000-12,800 बी पी के आसपास उभरी। इस संस्कृति की विशेषता ज्यामितीय सूक्ष्मपाषाण औज़ार हैं। केबरान संस्कृति (लगभग 13,500-11,500 बी पी) को कोर से ब्लेड के टुकड़ों (bladelets) को हटाकर औज़ार बनाने वाली संस्कृति के रूप में चिह्नित किया जाता है। ब्लेडलेट्स सूक्ष्मपाषाण औज़ार थे जो 4-7 मिलीमीटर से लेकर विभिन्न आकार के होते थे। अर्थव्यवस्था शिकार और संग्रहण पर आधारित थी। लगभग 13,000 बी पी में, दक्षिण-पश्चिम एशिया ने पर्यावरण और वानस्पतिक परिवर्तनों को देखा। इन स्थलों पर पत्थरों के पीसने वाले औज़ार (नवपाषाण संस्कृति की विशेषता में से एक) जैसे खल्ल और मूसल और अन्य औज़ार भी पाए गए।

नातुफियान संस्कृति, लगभग 12,500-10,200 बी पी, के स्थल लीवेंट से कृषि की शुरुआत के सबूत मिलते हैं। इसलिए इसे मध्यपाषाण और नवपाषाण चरणों के बीच संक्रमण की अवधि के रूप में देखा जाता है। इस संस्कृति को गांवों के साथ एक स्थान पर बसकर रहने वाली जीवन शैली द्वारा चिह्नित किया गया है। इस संस्कृति को सूक्ष्मपाषाण, तक्षणी, परिवेधक, खुरचनी, ब्लेड, चाकू और कुदालों द्वारा परिभाषित किया गया है। बाद में यहाँ तीर की नोकें भी पाई गईं। इसके साथ-साथ, चक्की, मूसल, ओखली और अन्य पत्थर के पीसने वाले औज़ार और पत्थर के पात्र भी पाए गए। मछली के हुक, और जाल के साक्ष्य इस संस्कृति के मानव आहार में मछली के महत्व को दर्शाते हैं। हालांकि, इस संस्कृति के लोग अभी भी शिकारी थे और खाद्य संग्रहण करते थे और सबूत दर्शाते हैं कि वे जानवरों जैसे चिंकारा (gazelle), हिरण, जंगली बकरी इत्यादि का शिकार करते थे।

अन्वेषणों के आधार पर, पुरातत्त्वविद, अन्ना बेलफ़र-कोहेन और ओफर बार-योसफ (1989) का तर्क है कि लीवेंट से प्राप्त साक्ष्य प्रारंभिक नातुफियान संस्कृति में साल भर एक ही स्थान पर बसावट को इंगित करते हैं। उनके अनुसार, यह सांस्कृतिक रूप से एक जटिल शिकारी-संग्राहक समाज था जिसमें आवास, भूमिगत भंडारण, कब्रें, चकमक (flint) कलाकृतियों, तथा पत्थर और हड्डी की कलाकृतियों को देखा जा सकता है। साक्ष्य 'आधार शिविरों' और 'मौसमी शिविरों' के मध्य अंतर दर्शाते हैं (बेलफ़र-कोहेन, 1989: 473-74)। पूर्ण बसावट और अर्द्ध-बसावट के आधार पर बस्तियों में हुए परिवर्तनों ने लीवेंट को भी परिवर्तित किया (बेलफ़र-कोहेन, 1989: 474)।

बोध प्रश्न-4

1) मध्यपाषाण संस्कृति की महत्वपूर्ण विशेषताएं क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

2) मध्यपाषाण काल से जुड़े औज़ारों में प्रयुक्त तकनीकी क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

3) यूरोप में पाई जाने वाली मध्यपाषाण संस्कृतियों पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

4) संक्रमण काल के रूप में दक्षिण पश्चिम एशिया में नातुफियन संस्कृति के महत्व पर चर्चा कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

3.5 सारांश

पुरापाषाण और मध्यपाषाण काल प्रमुख परिवर्तनों का काल था, जिसने मानव समाज की नींव रखी। जैविक परिवर्तनों के साथ, प्रारंभिक मानव महान् सांस्कृतिक बदलाव भी ला रहे थे। सरल ओल्डोवान औज़ार बनाने की कला के साथ प्रारम्भ करके वे इतिहास के उस पड़ाव तक पहुँचे जहां उन्होंने ब्लेड के प्राथमिक रूपों का उत्पादन शुरू किया। संमार्जक (scavenger) से वे विशेषज्ञ शिकारियों के साथ-साथ संग्रहकर्ता के रूप में विकसित हुए। पर्यावरणीय परिवर्तनों को अपनाने से लेकर, नई परिस्थितियों में समायोजन करने तक, प्रारम्भिक मानव ने एक साधारण शिकार-संग्राहक-संमार्जक से खाद्य उत्पादक अर्थव्यवस्थाओं में रूपांतरण तक का अपना सफ़र तय किया। इस काल में औज़ार तकनीकी, समाज, अर्थव्यवस्था, धर्म, साथ ही सभ्यता के संदर्भ में हम जिन परिवर्तनों को देखते हैं, उन्होंने मानव विकास के अगले चरण का मार्ग प्रशस्त किया।

3.6 शब्दावली

फलक : औज़ार बनाने के लिए इस्तेमाल किए गए पत्थर के छोटे और पतले टुकड़ों की कतरनें

नैपिंग : पत्थर के मूल से फ्लेक्स हटाने की प्रक्रिया

पुरापाषाण : पत्थर के औज़ार के विकास से चिह्नित प्रागैतिहासिक काल जिसे पुरापाषाण काल कहा जाता है।

मध्यपाषाण : इसका शाब्दिक अर्थ है मध्यपाषाण का काल, यह पुरापाषाण और नवपाषाण काल के बीच का मानव प्रागैतिहासिक काल है।

सूक्ष्मपाषाण : पत्थरों के सूक्ष्म औज़ार

3.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न-1

1) शिकार-संग्रहण और संमार्जक अर्थव्यवस्थाओं की व्याख्या करें। इस्तेमाल किए गए औज़ारों और उनके कार्यों का भी उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.2 देखें

2) कुल्हाड़ी, चाकू जैसे सरल औज़ारों का उल्लेख करें और यह बताऐं कि शिकार के औज़ार के रूप में वे कितने उपयोगी थे। उप-भाग 3.3.2 देखें

3) औज़ारों, अग्नि के प्रयोग, भाषा आदि से संबंधित *होमो इरेक्टस* से जुड़े परिवर्तनों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.2 देखें

बोध प्रश्न-2

1) औज़ारों, उनकी आयु, उनके प्रकार, उपयोग और कार्य, आर्थिक गतिविधि, सामाजिक परिवर्तनों के साथ-साथ दफनाने के संबंध में विभिन्नताओं को स्पष्ट करें। उप-भाग 3.3.2 और 3.3.3 देखें

2) मॉस्टेरियन औज़ार तकनीकी, शिकार रणनीतियों, बसावट के विभिन्न स्थलों, और दफनाने के तरीकों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.2 और 3.3.3 देखें

बोध प्रश्न-3

1) औज़ारों और जीवन निर्वाह रणनीतियों के बारे में विवरण के साथ यूरोप में पाई गई संस्कृतियों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.3.4 देखें

2) शिला चित्रों का विवरण करें: उनकी विषय वस्तु, रंग, पत्थर का चयन, इत्यादि। इन गतिविधियों से संबंधित विभिन्न व्याख्याओं पर भी चर्चा करें। उप-भाग 3.3.5 देखें

बोध प्रश्न-4

1) खाद्य की प्राप्ति, औज़ारों में परिवर्तन, जीवन निर्वाह अर्थव्यवस्था आदि के संदर्भ में विशेषताओं का उल्लेख करें। भाग 3.4 और उप-भाग 3.4.1, 3.4.2 और 3.4.3 देखें

2) मध्यपाषाण औज़ारों का संदर्भ दें: उनकी विविधता और उपयोग के बारे में बताऐं। उप-भाग 3.4.2 देखें

3) मध्य यूरोपीय और उत्तरी यूरोपीय संस्कृतियों दोनों का उल्लेख करें। उप-भाग 3.4.4 देखें

4) सांस्कृतिक विशेषताओं के साथ संक्रमण की अवधि के रूप में नातुफियनों के महत्व का उल्लेख करें। उप-भाग 3.4.6 देखें

3.8 संदर्भ ग्रंथ

आंद्रेफस्की जूनियर विलियम, 2009. 'द एनालिसिस ऑफ़ स्टोन प्रोक्योरमेंट' एंड मेन्टिनेन्स, *जर्नल ऑफ़ आर्कियोलॉजिकल रिसर्च,* भाग 17(1): 65-103.

आर्थर, कैथ्रीन डब्ल्यू, 2010. 'फेमिनिन नॉलेज एंड स्किल रिकंसिडर्ड': विमेन एंड फ्लेकड स्टोन टूल्स', *अमेरिकन एंथ्रोपोलॉजिस्ट,* न्यू सीरीज़, भाग 112(2): 228-243.

बेलफ़र-कोहेन, अन्ना और ओफर बार-योसेफ, 1989. 'द ऑरिजिंस ऑफ़ सेडेंटिज्म एंड फार्मिंग कम्युनिटीज इन द लीवेंट', *जर्नल ऑफ प्रिहिस्ट्री*, भाग 3(4): 447-498.

बिनफोर्ड, लुईस आर. और सैली आर. बिनफोर्ड, 1966. ए प्रेलिमिनरी एनालिसिस ऑफ़ फंक्शनल वेरिअबिलिटी इन द लेवलियोइस फैंसीज़ के, *अमेरिकन एथ्रोपोलॉजिस्ट*, 68(2): 238-295.

बोर्डेस, फ्रैंकोइस, 1961. 'मॉस्तारियन कल्चर्स इन फ्रांस', *साइंस*, न्यू सीरीज, 134(3482): 803-810.

चाइल्ड, वी. गॉर्डन, 1956 1942. *व्हाट हैपनड इन हिस्ट्री*, हार्मंडवर्थः पेरेग्रीनबुकस.

चाइल्ड, वी. गॉर्डन, (1945). 'डायरेक्शनल चंजेस इन फ्यूनेररी प्रैक्टिसेज डूरिंग 50,000 इयर्स', *मैन*, 45: 13-19.

फेगन, ब्रायन एम., और नाडिया दुर्रानी, 2014. *पीपल ऑफ़ द अर्थः एन इंट्रोडक्शन टू वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री*, 14वां संस्करण, न्यूयॉर्कः रूटलेज.

फेगन, ब्रायन एम, 2002, *वर्ल्ड प्रीहिस्ट्री ए ब्रीफ इंट्रोडक्शन*, पांचवां संस्करण. न्यू जर्सीः प्रेंटिस-हॉल.

गैबेल, डब्ल्यू. सी., 1958. 'द मेसोलिथिक कंटिन्यूयम इन वेस्टर्न यूरोप', *अमेरिकन एंथ्रोपोलॉजिस्ट*, न्यू सीरीज़, भाग. 60(4): 658-667.

होडर, इयान, 2016. *स्टडीज इन ह्यूमन-थिंग एंटेगलमेंट*, ओपन एक्सेस लाइसेंस फ्रॉम क्रिएटिव कॉमन्स एट्रिब्यूशन.

लाएट, एस.जे. डे (संपा.), ए.एच.दानी, जे.एल. लोरेन्जो गीइज़्टर और आर.बी. नूनू (सह-संपादक). 1996. *हिस्ट्री ऑफ़ ह्यूमैनिटी*, भाग 1: *प्रीहिस्ट्री एंड द बिगनिंग ऑफ़ सिविलाइज़ेशन*. यूनेस्को. लंदनः रूटलेज.

ली, रिचर्ड बी. और आई. देवोर (संपा.), 1968. *मैन द हंटर*, न्यूयॉर्कः एल्डिन डी ग्रुइटर.

मिथेन, स्टीफन, 1995. 'पेलिओलिथिक आर्किओलॉजी एंड द इवोल्यूशन ऑफ माइंड', *जर्नल ऑफ आर्कियोलॉजिकल रिसर्च*, भाग 3(4): 305-332.

ओहेल, मिला वाई, 1978., ''क्लेक्टोनियन फ्लेकिंग" एंड प्राइमरी फ्लेकिंगः सम इनिशियल ऑब्ज़र्वेशन्स'. *लिथिक टेक्नोलॉजीस*, 7(1): 23-28.

पालासीओ-पेरेज़, ई., 2013. 'द ओरिजिंस ऑफ़ द कांसेप्ट ऑफ़ 'पेलिओलिथिक आर्ट': थियोरिटिकल रूट्स ऑफ एन आइडिया', *जर्नल ऑफ आर्कियोलोजिकल मेथड्स एंड थ्योरी*, वॉल्यूम 20(4): 682-714.

प्राइस, डगलस, 1991. 'द मेसोलिथिक ऑफ़ नॉर्दर्न यूरोप', *एनुअल रिव्यु ऑफ़ एंथ्रोपोलॉजी*, भाग 20: 211-233.

सैंडगाथ, डेनिस एम. 2004. 'अल्टरनेटिव इंटरप्रिटेशन ऑफ़ लेवलियोइस रिडक्शन तकनीक', *लिथिक टेक्नोलॉजी*, 29 (2): 147-159.

स्टाउट, डाइट्रिच, 2011, 'स्टोन टूलमेकिंग एंड द इवोल्यूशन ऑफ ह्यूमन कल्चर एंड कॉग्निशन', *फिलोसोफिकल ट्रांज़ैक्शंसः बायोलॉजिकल साइंसेज*, 366(1567): 1050-1059.

टैनर, नैन्सी और एड्रियान जिहलमैन, 1976. '*वीमेन इन इवोल्यूशन.* भाग 1: *इनोवेशन एंड सलेक्शन इन ह्यूमन ओरिजिंस, साइन्स,* 1(3): 585-608.

वेन्के, रॉबर्ट और डेबोरा आई. ओल्स्ज़वेस्की, 2006 (1980). *पैटर्न्स इन प्रीहिस्ट्री: ह्यूमनकाइंडस फर्स्ट थ्री मिलियन इयर्स.* पांचवां संस्करण, न्यूयॉर्क: ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

जिहलम, एड्रियान एल, 1978. '*वीमेन इन इवोल्यूशन,* भाग 2: *सब्सिस्टेंस एंड सोशल ऑर्गनाइजेशन अमंग अर्ली होमिनिड्स*, *साइन्स,* 4(1): 4-20.

पी डी एफ:

https://www.jstor.org/stable/pdf/2949307.pdf?refreqid=search%3Af915cb64622b05eda2bd630f15cf13ea

https://www.jstor.org/stable/pdf/41492314.pdf?refreqid=search%3Af9d917af0f4d7cdaf506748db9444eed

3.9 शैक्षणिक वीडियो

हिस्ट्री डॉक्यूमैन्टरी स्टोरीज़ फ्राम द स्टोन ऐज : द हयूमन एडवेन्चर

https://in.video.search.yahoo.com/search/video?fr=spigot-nt-gcmac&p=prehistoric+tool+bbc+documentary:id=2&vid=9ce7c690f5fdd1c32adb23b72f71a334&action=click

व्हाय प्रीहिस्टॉरिक वीमेन हैड सुपर-स्ट्रांग बोन्स

https://video.nationalgeographic.com/video/171129-strong-prehistoric-women-vin-spd

मिस्ट्री ऑफ लाइफ इन द पैलिओलिथिक ऐज

https://www.youtube.com/watch?v=Tx9cuROQWlM

80 Blank